



نِعْمَتِ الْبِدْعَةِ طَهْرٌ

हर बिदअत गुनाह  
नहीं

कुफ्र

मुर्दे का  
सुनना

शिक

क़बर पर  
अज़ान

बिदअत

गैरुल्लाह से  
मदद

तसनीफ़  
सय्यिद मुहम्मद सिकन्दर वारसी



तुफ़ नजदियत ना कुफ़ ना इस्लाम सब पे हर्फ़  
काफिर इधर की है, ना उधर की अधर की

# हर बिदअत गुनाह नहीं

नाम किताब - हर बिदअत गुनाह नहीं

तस्लीफ़ - सय्यिद मुहम्मद सिकन्दर वारसी

अनुवाद - अज़ खुद मुसन्निफ़

कम्पोजिंग - अज़ खुद मुसन्निफ़

प्रूफरीडिंग - नूर हसन

सफ़हात - 90

कुल सुवाल - 30

कीमत - -

---

मिलने का पता - [www.SayyidZada.com.co.in](http://www.SayyidZada.com.co.in)

हर सुन्नी (बरेलवी) शख्स/प्रेस/इदारे/तंज़ीम/ को (बिना किसी तबदीली के)

इस किताब को छापने/छपवाने की इजाजात आम है

अहले इल्मे से गुज़ारिश है की कहीं खता पाए तो इस्लाह करें,

S.No	फेहरिस्त	पेज
1	क्या रसूलुल्लाह (صلی اللہ علیہ وآلہ وسلم) का साया था	7
2	कान में अज़ान और क़ब्र में दफनाने के बाद अज़ान	9
3	बिदअत की कितनी क्रिस्म है, क्या हर बिदअत गुमराही है	18
4	हम इमाम अबु हनीफ़ा को क्यों फॉलो करते हैं (तक़लीद)	26
5	क्या वसीलाह लेना सही है, औलिया से मदद मांगना	33
6	या अली मदद, या ग़ौस मदद, ये सब कहना कैसा	35
7	हुज़ूर (عليه السلام) के नामे पाक पर अंगूठे चूमना	37
8	इमाम के पीछे किरअत मना है	39
9	सदल क्या होता है सदल नमाज़ में मकरूह है	41
10	रहमतुल्लिल आलमीन की पैदाइश और वफात की तारीख	44
11	मुरीद के मायने, क्या किसी का मुरीद होना ज़रूरी होता है	45
12	استوا على العرش पर अहले सुन्नत का मोक़ूफ़ और अक़ीदह	47
13	हाथ चूमना या क़दम का बोसा लेना कैसा	50
14	जिस ने तावीज़ लटकाया उसने शिर्क किया	53
15	मुर्दे सलाम सुनते हैं, और जवाब देते हैं	55
16	उर्स के माने क्या हैं,	61
17	कुरआन के मायने खुद पढ़ सकते हैं, उसे समझ सकते हैं	62
18	हिला शरई क्या होता है, ये कहा से साबित है	64
19	नमाज़ में रफय़दैन क्यों नहीं करनी चाहिए	67
20	क़ब्रों पर फूल चढ़ाना कैसा क्या सहाबा ने ऐसा क्या है	69

[illegible]

بسم الله الرحمن الرحيم الحمد لله رب العالمين  
الصلوة والسلام عليك يا رسول الله (أم بعد)

## इब्तिदाई बातें

किताब मसाइले शरीअत की 4 जिल्दे मुकम्मल होने के साथ ही उसमे हज़ारो फ़िक्ही सुवालात के जवाबात मेहफूज़ किये जा चुके थे, जो की फ़िक्ही हनफ़ी की मज़हब पर लोगो के ज़रिये सुवाल ज़वाब का मजमुआ है, उसमे ना सिर्फ़ मसाइले अहनाफ़ दर्ज थे, बल्कि बदमज़हब फ़िरके जैसे देवबंदी, वहाबी वगेरा के रद्द भी दलाईले अकलिया और नकलिया से किया गया था, और साथ ही अक्राइदे अहले सुन्नत और मसलके आलाहज़रत को भी वाज़ेह किया गया, मगर किताब ज़खीम होने की वजह से लोग उसका मुकम्मल मुताला करते ये ज़रूरी नहीं था, लिहाज़ा ज़रूरत को महसूस करते हुए उस किताब से रद्दे वहाबियत के सुवाल जवाब को चुन कर अलग कर लिए गया, ताकि अवामे अहले सुन्नत के लिए एक आसान फेहम किताब तरकीब में आ सके, पेशे नज़र किताब "हर बिदअत गुनाह नहीं" उसी मसाइले शरीअत किताब से चुने गए सुवाल जवाब हैं, जिसमे आसान और सहल अंदाज़ में बदमज़हब की जानिब से किये जाने वाले कुछ खास सुवालों के जवाब नक़ल है, इसमें कुल 30 ऐसे सुवाल दर्ज हैं जो अक्सर बदमज़हब हमारी सुन्नी अवाम से पूछते हैं, लिहाज़ा अवाम की आसानी के लिए ताकि वो बातिल से अपने अक्रीदे को मेहफूज़ कर सके और मुस्तबाहते अहले सुन्नत की दलील सीख सके, किताब का इतिखाब किया गया,

### किताब की ज़रूरत क्यों हुई -

इसमें शक नहीं की आज के बदमज़हब हमारी सुन्नी अवाम को बहकाने के लिए उनसे अक्सर मुस्तहब्बात पर ही बात करते हैं, यानि नियाज़ क्यों देते हो, क़ब्र पर अज़ान क्यों देते हो, इमाम के पीछे क़िराअत क्यों नहीं करते, गैरुल्लाह से क्यों मांगते हो, वगेरा वगेरा, और तो और ऐसा भी देखा गया गया है की, खुद घर में बच्चे अगर

अपने वालिद से नियाज़ फातिहा कूँडें क़ब्र पर अज़ान का सुवाल कर बैठते हैं तो सही जवाब ना आने की वजह से उन्हें हीले बहाने बनाने पढ़ते हैं, आज हमारी अवाम जो नियाज़, फातिहा, दरगाह को जाना वगेरा वगेरा को जाइज़ तो मानती है, मगर खुद उन्हें मालूम नहीं होता की, इसकी असल क्या है, लिहाज़ा वो वहाबी के जवाब ना देने की बिना पर कभी कभी अपना अक़ीदा खो देते है, और फिर वहाबी अपनी बातिल दलील पेश करते है जिसे इल्म ना होने की बिना पर सुन्नी हज़रात सही मान लेते है, लिहाज़ा ज़रूरत महसूस हुई की कुछ चुनिंदा सुवालात को अलग करके एक छोटी (कम सफ़हात) किताब तैयार की जाये, जिसमे हमारी अवाम को सीखने में आसानी भी हो और वो अपने अक़ीदे और मामूलात को मेहफूज़ कर सके, लिहाज़ा मैं उम्मीद करता हूँ, इसे हर शख्स को कम अज़ कम एक बार ज़रूर पढ़ना चाहिए, ताकि वो अपने अक़ीदे को और मज़बूत कर सके, और अपने बच्चो को भी मामूलाते अहले सुन्नत समझा सके, और सिखा सके

### किताब की खुसूसियत -

क्यूंकि ये किताब खास सुन्नी अवाम के लिए बातिल के रद्द में तोहफा है इसिलए इसे सबसे पहले हिंदी में ट्रांसलेट लिया गया, इसमें शक नहीं अक्सर अवाम उर्दू से वाक्फ़ि नहीं है, और वो ज़खीम किताबे हिंदी की भी पढ़ने से परहेज़ करती है, लिहाज़ा इसे आसान और सहल हिंदी में पेश किया गया ताकि किताब का सही मक़सद वजूद में आ सके,

अल्लाह से दुआ है की, इसे पढ़ने वाले के हक़ में मग़फ़िरत का जरिया बनाये,

Talib e DUA e MAGHFIRAT



Sayyid Muhamamd Sikander Warsi

**सुवाल:1 (986, जिल्द: 2)**

**क्या रसूलुल्लाह (ﷺ) का साया था दलील के साथ जवाब दें, हमें उम्मीद है हमें जल्द हमारे सवालों के जवाब मिल जाएंगे**

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

(खुल्बा) - तमाम तारीफ़ उस अल्लाह की जो नूर है ज़मीनो आसमान का, और हर साये से पाक, मगर सब उसकी रहमत के साये में और करम के उम्मीदवार, और दुरुदो सलाम हो उस मुक़द्दस हस्ती पर, जो आज भी अपना साया किये हुए है, खाकसारो पर, और उनके साये में ही आराम पाएंगे, कल तपिशे महशर में, और आल ओ असहाब पर, और खुसूसी सलाम बरेली के ताजदार पर, जो हमें सिखाते रहे, की. ...

"हम सियाकारो पे या रब तपिशे ए महशर में  
साया अफगन हो तेरे प्यारे के प्यारे गेसूं "  
और फरमाते हैं आलाहज़रत की...

"साये का साया ना होता है ना साया नूर का"

**अल-जवाब :-**

बेशक़ उस मदीने के ताजदार का साया नहीं था जैसा की .

فقد اخرج الحكيم الترمذی عن ذکوان ان رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم لم یکن یزی له  
ظل فی شمس ولا قمر

(हाकिम तिर्मिज़ी ने रिवायत किया- हुज़ूर का साया नज़र नहीं आता था ना धूप में ना चांदनी में)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضي الله عنه) ने **खसाइसे कुबरा** में नक़ल किया

قال ابن سبع من خصائصه صلى الله تعالى عليه وسلم ان ظله كان لا يقع على الارض وانه كان  
نورا فكان اذا مشى في الشمس والقمر لا ينظر له ظل قال بعضهم ويشهد له حديث قول صلى  
الله تعالى عليه وسلم في دعائه واجعلني نورا

(इन्ने सबा ने कहा, हुज़ूर की खुसूसियत में से है की आपका साया ज़मीन पर  
ना पड़ता, और आप नूर महज़ थे, तो जब धूप या चांदनी में चलते, आप का  
साया नज़र ना आता, बाज़ उलामा ने फ़रमाया इसकी गवाह वह हदीस है,  
की हुज़ूर ने अपनी दुआ में कहा, “मुझे नूर कर दे”

और शरह शामी ने तिर्मिज़ी से इसकी हिक्मत ये नक़ल की, कि कहीं कोई  
काफिर आपके साये पर पैर ना रख दे, इसमें आपकी तोहीन है”

قال عثمان رضى الله تعالى عنه ان الله ما وقع ظلك على الارض لتلاضع انسان قدمه على ذلك الظل  
(हज़रत उस्मान ग़नी ने हुज़ूर से अर्ज़ की बेशक़ अल्लाह ने हुज़ूर का साया  
ज़मीन पर ना डाला, की कोई शख्स उस पर पाऊं ना रख दे),

अल्लामा सुलैमान जबल (رضي الله عنه) फुतूहाते अहमदिया में फरमाते हैं:

لم يكن له صلى الله تعالى عليه وسلم ظل يظهر في شمس ولا قمر:

(हुज़ूर का साया ना धूप में ज़ाहिर होता ना चांदनी में)

शरह शिफा शरीफ में है

من اسمائه صلى الله تعالى عليه وسلم قيل من خصائصه صلى الله تعالى عليه وسلم انه اذا مشى في  
الشمس والقمر لا يظهر له ظل

(हुज़ूर का नाम नूर है, हुज़ूर की खसाइस में शुमार किया गया की धूप और  
चांदनी में चलते तो साया नज़र ना आता ना पैदा होता)

शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) मदारिजुन नबूवत में फरमाते हैं

ونبودمراخضرت را صلى الله تعالى عليه وسلم سايه نه در آفتاب ونه در قمر

(सरकार का साया सूरज और चाँद की रौशनी में ना था)

والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب



**सुवाल:2 (1632 जिल्द:3)**

जब इंसान पैदा होता है तो उसके कान में अज्ञान दी जाती है, और जब इंतकाल होता है तो कब्र में दफनाने के बाद अज्ञान दी जाती है, मुझे ये जानना है के जब पैदा होता है तो उस अज्ञान की तो नमाज़ हो जाती है जनाज़े की फिर जो दफनाने के बाद अज्ञान देते वो क्यों है ये बता दीजिये

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

अहले सुन्नत ही में ये सुन्नत आज भी राइज है

अज्ञान, ग़ैरे नमाज़ भी जा-बा-जा जाइज है

(खुत्बा) क्लब ओ जुवान से इकरार है, की तमाम तारीफ और इबादत

अल्लाह ता'अला के लिए, और वही इबादत के लाइक, जिसने बुलंद किया

अपने नाम के साथ, अपने हबीब के नाम को हर अज्ञान में, ताकि फ़र्ज़

(नमाज़) से पहले उसके हबीब को याद किया जाये, और नमाज़ को हक़ीक़ी

ज़िन्दगी मिले, जिसे इमामे अहले सुन्नत ने ये फ़रमाया की,

पहले हो उनकी याद, की पाए जिला नमाज़

कहती है ये अज्ञान जो पिछले पहर की है”

और बेशुमार दुरूद ओ सलाम हो , कब्र पर ज़िक्र करके ज़िक्र को कब्र पर

जवाज़ करने वाले आक्रा पर और उनकी आल ओ असहाब पर

**अल-जवाब :-**

अज्ञान और नमाज़ के ताल्लुक से अक्ल्ले इंसानी से एक वस्वसे शैतानी को बा-आसानी दूर करना चाहता हूँ,

ये जो सुवाल में लिखा गया है की जब बच्चा पैदा होता है तो उसके कान में अज्ञान दी जाती है और अज्ञान की नमाज़ मौत के वक़्त होती है, और ऐसा ही ख्याल बहुत से लोगों का है,

अव्वल तो मैं ये अर्ज़ कर दूँ की जो लोग समझते हैं की जनाज़े की अज़ान इसलिए नहीं होती की उसकी अज़ान कान में दे दी गई है, तो ये ग़लत और बे-असल है,

आप ज़रा गौर करो हमारी शरीअत में अज़ान सिर्फ़ नमाज़ ही के लिए नहीं बल्कि और भी कई मोक़ो पर अज़ान देने का हुक्म है और उन मोक़ो पर भी नमाज़ नहीं होती, और दूसरी बात ये की हमारी शरीअत में अज़ान केवल फ़र्ज़ नमाज़ के ही लिए होती है, जैसा की **बहारे शरीअत जिल्द:1 सफ़ह:464** पर है - "फ़राइज़ के सिवा बाकी नमाज़ों मसलन- वित्र, जनाज़ा, ईदैन,... तरावी.... चाशत... नवाफिल.. में अज़ान नहीं"

इससे साबित हुआ की नमाज़े जनाज़ा की अज़ान नहीं होती लिहाज़ा कान में जो अज़ान दी जाती है उसकी फ़ज़ीलत अलग है, उसे नमाज़े जनाज़ा से जोड़ना ग़लत है, और फिर भी किसी को ये बात समझ नहीं आती, और वो कहता है की, नहीं हर नमाज़ के लिए अज़ान है, तो फिर इशराक, तहज़ुद, ईदैन की नमाज़ में अज़ान क्यों नहीं ?

**अब एक अर्ज़** - अगर ये माना जाये की उसी अज़ान पर नमाज़े जनाज़ा होती है तो मैं ऐसे लोगों से पूछना चाहता हूँ की अज़ान के कितने देर बाद नमाज़ पढ़ सकते है,? क्योंकि हमारे इस्लाम में तो वक़्त के अंदर ही अज़ान दी जाये और उसी वक़्त में नमाज़ अदा कर ली जाये, और जिसने अज़ान के बाद नमाज़ ना पढ़ी और वक़्त निकल गया तो अब उस अज़ान का वक़्त ख़तम, दुसरे वक़्त के लिए दूसरी अज़ान होगी, उसी अज़ान पर नमाज़ नहीं हो सकती, कभी आपने ऐसा सुना है की आज की ज़ोहर की अज़ान से एक हफ़्ते तक नमाज़ पढ़ ले ? अगर नहीं तो पैदाइश में की गई अज़ान की वैलिडिटी 60 साल से ज़्यादा क्यूँ रहती है यानि अज़ान के इतने अरसे बाद नमाज़ ? (चलो ये भी छोड़ो)

अब और एक खास बात- आपने सुना ही होगा की नमाज़ बालिग़ मुसलमान पर फ़र्ज़ है और उसी पर शराअ के अहकाम की पैरवी लाज़िम होती है तो में ये अर्ज़ करना चाहता हूँ की अगर आप उस अज़ान को उस बच्चे की नमाज़े जनाज़ा से जोड़ते है तो फिर बच्चे पर तो नमाज़ फ़र्ज़ ही नहीं तो उसे अज़ान दे कर क्या फायदा और उसके कान में क्यूँ कहा जाता है, "आओ नमाज़ की तरफ" जबकि उस पर तो नमाज़ फ़र्ज़ नहीं उसे अज़ान और नमाज़ से क्या वास्ता ?

अब असले-जवाब पर

फतावा रज़विया जिल्द: 5 सफ़ह: 658 पर है

"बाज़ उलामा ऐ दीन ने मय्यित को क़बर में उतारने के वक़्त अज़ान कहने को सुन्नत फ़रमाया है"

हक़ ये है की क़ब्र पर अज़ान ना देने यानि अज़ान मना होने की शरीअत में कोई दलील नहीं, और जिस काम से शरीअत मना ना फरमाये, वो काम ममनु नहीं हो सकता किसी भी काम के जाइज़ होने के लिए इतना काफी है की शरीअत में मना नहीं, और जो इसे मना करे उसे चाहिए की वो अपना दावा शरीअत से साबित करे,

क़ब्र पर अज़ान के फायदे -

कुरआनो हदीस में जितने भी अज़ान के फायदे हैं वो क़ब्र पर देने से भी हासिल होते है तो अब शरीअत अज़ान का क्या हुक्म बयान करती है इस तरफ एक नज़र और अज़ान आखिर है क्या इस पर भी एक नज़र इस हदीस को इमाम तिरमिज़ी ने रिवायत किया -

إذا سئل الميت من ريك ترائى له الشيطان في صورت فيشير الى نفسه اى اناريك هـ فهذا  
ورد سوال التثبیت له حين یسئل

(जब मुर्दे से सुवाल होता है की तेरा रब कौन है शैतान उस पर ज़ाहिर होता है और अपनी तरफ इशारा करता है इसलिए हुक्म आया की मय्यित के लिए

जवाब में साबित कदम रहने की दुआ करो,)

और सहीह हदीसों से साबित है की अज्ञान के वक़्त शैतान भाग जाता है

**मुस्लिम शरीफ** اذاذن المؤذن ادبر الشيطان وله حصاص

(जब मोअज़्ज़िन अज्ञान कहता है तो शैतान पीठ फेर कर भाग जाता है)

**दलील 1** - जब हदीस से ये साबित है की शैतान क़ब्र में आता है और ये यह भी साबित है की अज्ञान से शैतान भाग जाता है, तो क़ब्र पर अज्ञान देने से ज़रूर शैतान मुर्दे को ना बहका सकेगा

**हदीस मुसनद अहमद बिन हम्बल**

قال لمادفن سعد بن معاذ (زاد في رواية) وسوى عليه سبج النبي صلى الله تعالى عليه وسلم  
وسبج الناس معه طويلا ثم كبر وكبر الناس ثم قالوا يا رسول الله لم سبجت (زاد في رواية) ثم  
كبرت قال لقد تضايقت على هذا الرجل الصالح قبره حتى فرج الله تعالى عنه

(जब सअद बिन मुअज़ (रुज़ी अल्ले عنه) दफ़न हो चुके और क़ब्र दुरुस्त कर दी गई तो हुज़ूर देर तक "سبحان الله" फरमाते रहे सहाबा भी हुज़ूर के साथ कहते रहे, फिर हुज़ूर "الله أكبر" फरमाते रहे और सहाबा भी उनके साथ कहते रहे सहाबा ने अर्ज़ की हुज़ूर अब्बल तस्बीह और बाद में तकबीर क्यों फरमाते रहे, इरशाद फ़रमाया इस नेक मर्द पर इसकी क़ब्र तंग हुई थी, यहाँ तक की अल्लाह ने यह तकलीफ इससे दूर की और क़ब्र कुशादा फरमाई,)

**दलील 2**- इस हदीस से साबित हुआ की हुज़ूर ने मय्यित पर आसानी के लिए बाद दफ़न "الله أكبر" फ़रमाया और यही कलिमे अज्ञान में भी 6 बार है तो ऐन सुन्नत हुआ, अज्ञान में और कलिमे ज़्यादा हैं और कलिमे ज़्यादा होने से सुन्नत की नफ़ी नहीं होती, बल्कि और कलिमात पर अल्लाह की रहमत ही होगी, जब "الله أكبر" से क़ब्र कुशादा हो गई, पूरी अज्ञान का किया कहना,

हदीसों से ये भी साबित है की नज़अ के वक़्त मुर्दों को कलिमा सिखाओ जैसा की **सिहाह सिता** में है **لَقْنُوا مَوْتَكُمْ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ** अपने मुर्दों को **لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ** सिखाओ, **दलील 3-** जो नज़अ में है वो एक दम मुर्दा है और खुद हुज़ूर ने उसे कलिमा याद करवाने का हुक्म दिया तो क़बर में जब यानी सुवाल पूछे जाएँगे तो अज़ान से उसे जवाब याद आएगा इसकी अस्ल भी हदीस से साबित हो गई एक हदीस पाक में हुज़ूर ने फरमाया: **اطفؤا الحريق بالتكبير**

(आग को तकबीर से बुझाओ) और फरमाया: **إذا رأيتم الحريق فكبروا فإنه يطفئ النار** (आग देखो तो " **الله أكبر** " की तकबीर से उसे बुझाओ)

**मुल्ला अली अल-क्कारी मिरकात शरह मिश्कात** में उस हदीस के तहत (हुज़ूर देर तक तकबीर कहते रहे) फरमाते हैं:-

**التكبير على هذا لاطفاء الغضب الإلهي ولهذا اورد استحباب التكبير عند رؤية الحريق**

(अब ये अल्लाहु अकबर कहना ग़ज़बे इलाही के बुझाने को है लिहाज़ा आग लगी देखो तो देर तक तकबीर मुस्तहब ठहरी)

**दलील 4-** क़बर पर अज़ान देने की हिकमत ये भी है की हदीस में आया की आग लगी देखो तो तकबीर कहो यहाँ से ये भी साबित है की क़बरे मुस्लिम पर तकबीर कहना सुन्नत है लिहाज़ा अज़ान भी सुन्नत हुई,

हदीस **सुनन अबू दावूद, बैहिकी, और हाकिम** ने हज़रत उस्मान " **رضي الله عنه** " से रिवायत किया - **كان النبي صلى الله تعالى عليه وسلم اذا فرغ من دفن الميت وقف عليه - قال استغفروا لآخيكم وسلوا له بالثبث فإنه لا يئسأل**

"हुज़ूर जब दफ़ने मय्यित से फारिग होते क़बर पर फरमाया करते अपने भाई के लिए इस्तग़फ़ार करो और उसके लिए जवाबे नकिरैन में साबित क़दम रहने की दुआ माँगो की अब इससे सुवाल होगा"

मुल्ला अली अल-क़ारी मिरकात शरह मिश्कात में फरमाते हैं

كل دعا ذكر وكل ذكر دعا (सब दुआ ज़िक्र हैं और सभी ज़िक्र दुआ हैं)

दलील 5 - बाद दफ़न क़ब्रे मुस्लिम के पास दुआ करना सुन्नत से साबित है अज़ान खुद दुआ है बल्कि बेहतरीन दुआ बल्कि ज़िक्रे इलाही हर ज़िक्र दुआ है यह तो साबित हो गया की क़बर पर दुआ करना सुन्नत से साबित है और यह भी हदीस में है की हर दुआ से पहले कुछ नेक अमल (तसबीह वग़ैरा) कर लिया जाए (इससे कुबूलियत की उम्मीद बड़ जाती है)

मुस्लिम अबू दाऊद, तिर्मिज़ी ने एक हदीस नक़ल की:

آداب الدعاء منها تقديم عمل صالح وذكره عند الشدة

आदाबे दुआ में है की इससे पहले अमले सालेह हो, ज़िक्रे इलाही मुश्किल वक़्त में ज़रूर करना चाहिए (और अज़ान भी एक ज़िक्र बल्कि, ज़िक्रे सालेह है, जैसा की ऊपर गुज़रा)

और एक हदीस में फ़रमाया: اذا نادى المنادى فتحت ابواب السماء واستجيب الدعاء (जब अज़ान देने वाला अज़ान देता है तो आसमान के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं, और दुआ कुबूल होती है)

दलील 6- बस ये भी साबित है की हुज़ूर ने दफ़न बाद दुआ की और हदीस ख़बर दे रहीं हैं की अज़ान के बाद दुआ कुबूल होती है, और दुआ से पहले कुछ नेक अमल करना चाहिए कुछ ज़िक्र, तो ज़ाहिर है दफ़न बाद अज़ान देने से दुआ करने वाले के लिए कुबूलियत के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं, और ये की अज़ान भी ज़िक्र है और दुआ से पहले अज़ान देना यानि ज़िक्रे इलाही हुआ और ये भी कुबूलियत के अदब में से गुज़रा तो जो लोग बाद दफ़न क़ब्र पर अज़ान देते हैं फिर दुआ करते हैं तो गोया कितनी हदीसों पर अमल करते हैं और दुआ की कुबूलियत की उम्मीद भी क़वी हो जाती है.

अज्ञान जिक्रे इलाही है और जिक्रे इलाही अज्ञाब को दफा करता है,  
हदीस मुसनद अहमद, बैहकी ने नक़ल किया, फ़रमाया हुज़ूर ने

ما من شيء انجى من عذاب الله من ذكر الله

कोई चीज़ जिक्रे-इलाही से ज़्यादा अज्ञाबे-इलाही से निजात देने वाली नहीं  
और खुशी की खबर ये है की खास अज्ञान के बारे में खुद हदीस में फ़रमाया  
गया- اذا اذن في قرية امنها الله من عذابه في ذلك اليوم

जब बस्ती में अज्ञान दी जाती है अल्लाह उस दिन अज्ञाब से अमन दे देता है  
दलील 7- बेशक़ अपने मुसलमान भाई के पास अज्ञान दे कर उसकी क़ब्र  
बल्कि क़ब्रिस्तान से अज्ञाबे इलाही को दूर करना कैसा सवाब व मय्यित के  
लिए नफ़ाबख़श काम है,

अज्ञान जिक्रे मुस्तफा है और जिक्रे मुस्तफा रहमत नाज़िल होने का जरिया है,  
नसीमुर रियाज़ में है- جعلتك ذكراً من ذكرى فمن ذكرك فقد ذكرني

“मैंने तुम्हे अपनी याद में से एक याद किया, जो तुम्हारा जिक्र करे वो मेरा  
जिक्र करता है,” और जिक्र करने वाले के लिए तो हुज़ूर ने फ़रमाया :

حفظهم الملائكة وغشيتهم الرحمة ونزلت عليهم السكينة

उन्हें मलाइका घेर लेते हैं और रहमते इलाही ढाप लेती है उन पर सकीना  
और चैन उतरते हैं,

ये भी हदीस से साबित है की मुर्दे को क़ब्र तंग करती है और नए घर में उसका  
दिल घबराता है और सख़्त वहशत और घबराहट होती है और अज्ञान वहशत  
दो दूर करती है घबराहट को दूर करती है, और क्योंकि अज्ञान जिक्र है.

कुरआन में है- لا يذكر الله تطمئن القلوب- (सुन लो खुदा के जिक्र से चैन पाते हैं दिल)

हिलियतुल औलिया में एक हदीस नक़ल है फ़रमाया:

نزل ادم بالهند فاستوحش فزل جبرئيل عليه الصلاة والسلام فنأدى بالاذان

जब आदम (عليه السلام) को जन्नत से हिंदुस्तान में उतारा तो उन्हें घबराहट हुई तो जिब्राइल (عليه السلام) ने उतर कर अज्ञान दी

**दलील 8-** बस ये भी साबित है की ज़िक्र से दिल चैन पाते है, और अज्ञान बेहतरीन ज़िक्र है और अज्ञान से घबराहट दूर होती है और वहशत खत्म होती है तो कौन अक़ल वाला नहीं चाहेगा की वो नए घर में अपने अज़ीज़ की घबराहट को दूर करे, और कौन नहीं चाहेगा की अज्ञान दे कर मुसलमान की वहशत को दूर करे, मगर वो नहीं चाहेगा जिसे शैतान, अल्लाह के ज़िक्र (अज्ञान) से रोके (क्या ही अच्छी मिसाल)

जो मुसलमान अपने या किसी मोमिन भाई की क़ब्र पर अज्ञान देता है और उसके अज़ाब को दफा करने में मदद करता है और उसे क़ब्र में फायदा पहुंचाता है तो सुन लो उसके लिए हदीसें क्या कहती हैं: **सहीह मुस्लिम** में है  
 الله في عون العبد ما كان العبد في عون اخيه

अल्लाह बंदे की मदद में है जब तक बंदा अपने भाई मुसलमानों की मदद में है (क्या ही अच्छी मदद, मददे इलाही)

और इस हदीस को **बुखारी** ने नक़ल किया फरमाते है मदनी ताजदार:  
 من كان في حاجة اخيه كان الله في حاجته ومن فرج عن مسلم كربة فرج الله عنه بكربة من كرب يوم القيمة

(जो अपने भाई मुसलमान के काम मे हो अल्लाह उसकी हाजत रवाई फरमाता है और जो किसी मुसलमान की तकलीफ दूर करे अल्लाह उसके बदले कियामत की मुसीबतों से एक मुसीबत उस पर से दूर फरमाएगा)

जब हज़रत अली (رضي الله عنه) को हुज़ूर (عليه السلام) ने ग़मज़दा देखा फ़रमाया:  
 قال رأيت النبي صلى الله تعالى عليه وسلم حزينا فقال يا ابن ابي طالب اني اراك حزينا فربعض اهلك يؤذن في اذنك فانه درء الهم

मुझे हुज़ूर ने ग़मगीन देखा तो फ़रमाया ऐ अली में तुझे ग़मगीन पाता हूँ अपने किसी घर वाले से कह, की तेरे कान में अज्ञान कहे, अज्ञान ग़म और परेशानी को दफा करती है)



इमाम तबरानी ने एक हदीस नक़ल की फ़रमाया हुज़ूर (عليه السلام) ने :

ان احب الاعمال الى الله تعالى بعد الفرائض ادخال السرور على المسلم

(बेशक़ अल्लाह के नज़दीक़ फ़ज़्रों के बाद सब आमाल से बेहतर मुसलमान भाई को खुश करना है)

**दलील 9** - "लो वो आया मेरा हामी मेरा ग़मख़्वारे उम्म" तो देख लो ऐ सुन्नी मुसलमानो तुम्हारे लिए कैसा हसीन मौका है की क़ब्र पर अज़ान देकर अपने मुसलमान भाई को फायदा पहुँचाओ और जो ऐसा करे अल्लाह उसकी हाज़त पूरी करता है और ये भी साबित हुआ की मुसलमान भाई को जिस तरह हो सके फायदा पहुँचाना चाहिए, मगर सोचो क्या तुम्हारा मुर्दा मरने के बाद मुसलमान नहीं ? अगर है तो अज़ान दे कर फायदा पहुँचाओ, और क्योंकि वहाबी दुनिया में भी काफिर है लिहाज़ा उसका मुर्दा भी काफिर है मुर्दा काफिर को फायदा पहुँचाने की हदीस हमने नहीं पढ़ी, बल्कि उसके लिए दुआ मग़फ़िरत भी कुफ़्र है, तो बस ए मुसलमानो जिसके घर से कोई मुसलमान फोट हो तो उसके क़ब्र पर अज़ान दे कर फायदा पहुँचाये

**क़ब्र पर अज़ान देने की जो दलील ऊपर गुज़री उनका खुलासा ये है**

- \* शैतान के शर से पनाह
- \* अज़ान तकबीर है और तकबीर आग से अमन
- \* जवाबे क़ब्र में आसानी
- \* ज़िक़े अज़ान से अज़ाबे क़ब्र का दूर होना
- \* अज़ान ज़िक़्र है और ज़िक़्र हर वक़्त जायज़ है
- \* क़ब्र पर ज़िक़्र करना सुन्नत मतलब अज़ान भी सुन्नत
- \* अज़ान ज़िक़्र है और ज़िक़्र से दिल चैन पाता है
- \* अज़ान में ज़िक़े मुस्तफ़ा यानि रहमत उतरने का ज़रीआ

- \* अज्ञान से वहशत को दूर करना
- \* अज्ञान के ज़रिये रंज ओ ग़म को दूर करना
- \* कब्र पर दुआ सुन्नत और अज्ञान ज़िक्र है हर ज़िक्र दुआ यानि अज्ञान सुन्नत
- \* कब्र के पास तकबीर कहना सुन्नत अज्ञान में तकबीर है, अज्ञान सुन्नत
- \* मय्यित से शैतान को दूर भगाना, इत्तिबा ए सुन्नत

\* अज्ञान से मोमिन को फायदा पहुंचाना हदीस पर अमल

अब जो इतने फायदे हाथ आने की नियत से अपने मोमिन भाई की कब्र पर अज्ञान दे तो कैसे सवाब के ख़ज़ाने हाथ आएंगे, हदीस में फ़रमाया:

نية المومن خير من عمله (मुसलमान की नियत उसके अमल से बेहतर है)

और जो इल्मे नियत जानता है यानि हर काम से अच्छी अच्छी नियत करना जानता है तो वो हर हर काम में बहुत सवाब कमा सकता है तो कब्र पर अज्ञान भी अच्छी नियत के साथ दी जाये जो ऊपर गुज़री, हदीसों पर भी अमल होगा और जब तक अज्ञान देगा, खुद अज्ञान देने वाले पर और कब्र पर भी रहमते इलाही नाज़िल होती रहेगी, ज़रूर देने वाले की भी मग़फ़िरत हो जाये (अल्लाह ही देता है अक़ल कलामइल्म ओ हिकमत के करने की)

والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

सुवाल:3 (2142 जिल्द: 4)

अस्सलामु अलैकुम, हुज़ूर कुछ लोग जुमुआ मुबारक और बहुत सी बातों को बिदअत कह कर ना करने को कहते हैं, और कहते हैं की हदीसे पाक में है की हर बिदअत गुमराही है और जहन्नम में ले जाने वाला अमल, तो हज़रत बिदअत की ता'रीफ और उस के अक़साम की तफ़सीली मालूमात इरशाद फरमाये, और क्या वाकई में हर बिदअत गुमराही है, हज़रत कुरआन ओ हदीस की रौशनी में रहनुमाई फरमाये करम नवाज़िश होगी

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

(खुल्बा) - तमाम तारीफ उसी रब की जो खुदा है इमामे आजम का जिसने उलामा को अक्ले-सलीम दी की दीन में नए रास्ते पैदा करें ताकि क्रौम को आसानी हो और दुरूद ओ सलाम हो उस हस्ती पर जिसने सवाब की बशारत दी उनको जिन्होंने दीन में बिदअत पैदा की और आल ओ असहाब पर

अल-जवाब

बिदअत की तारीफ फ़क़त इतनी है की - "हुज़ूर के ज़ाहिरी विसाल के बाद दीन में जो कोई नई बात निकाल दी गई हो वो बिदअत है"

इसी तरह मुल्ला अली अल-कारी (رضي الله عنه) ने **मिरकात** में फरमाया -

"बिदअत के लुगवी म'अना हैं, नई चीज़, और शरई तोर पर हर वह नई चीज़ जो हुज़ूर के ज़माने के बाद ईजाद हुई बिदअत है"

**अशअतुल लम'आत शरह मिश्कात जिल्द:1 सफह:135** पर है

"ज़माना ए नबवी की क़ैद लगाई गई है - क्योंकि खुलाफ़ा ए राशिदीन के पाकीज़ा दौर में ईजाद शुदा नया काम को भी बिदअत कहा जायेगा, मगर दर हकीक़त ये नए काम भी सुन्नत में दाखिल हैं" हदीस में फ़रमाया - तुम पर मेरी और मेरे खुलाफ़ा ए राशिदीन की सुन्नत लाज़िम है "

अब जो हदीस में आया की-

فَلَنْ خَيْرَ الْخَدِيثِ كِتَابُ اللَّهِ وَخَيْرُ الْهَدْيِ هَدْيُ مُحَمَّدٍ (صلى الله تعالى عليه وآله وسلم) وَإِنْ  
شَرَّ الْأُمُورِ مُحَدَّثَاتُهَا وَكُلُّ بَدْعٍ ضَلَالَةٌ

(बेशक़ बेहतर कलाम अल्लाह की किताब है, और बेहतरीन रास्ता मुहम्मद (صلى الله عليه وآله وسلم) का रास्ता है और बदतरीन काम नया काम है और हर बिदअत गुमराही है)

अब रहा ये की बिदअत की कितनी क्रिस्म है तो अवाम में वैसे दो मशहूर हैं

1- बिदअते हसना - दीन में वह नई बात जो ना कुरआन हदीस के खिलाफ हो और ना सुन्नत को मिटाने वाली हो

**2- बिदअते स'इया** - दीन में वह नया काम जो इस्लाम के खिलाफ हो या सुन्नत को मिटाने वाला हो

मगर बिदअत की 5 क्रिस्म हैं -

**1- बिदअते वाजिब** - जिस पर अमल करना ज़रूरी है जैसे कुरआन को सीखने सिखाने के लिए इल्मे नहव का सीखना, फ़िक्ह और हदीस को सीखने के लिए उसूले फ़िक्ह ओ हदीस पढ़ना ।

**खुलासा-** हुज़ूर के बाद दीन में कई ऐसे ज़रूरी काम किये गए, जो नए हैं यानि हुज़ूर के वक़्त में ना थे अब हैं, और उनका होना इस्लाम में लाज़िम ही है, जैसे कुरआन में ज़ेर, ज़बर, लगाना- अब आप ही सोचो बिदअत के फतवे देने वाले वहाबी जो कुरआन आज हिंदुस्तान में पढ़ रहे है, सारे ज़ेर ज़बर, पेश, के साथ है, क्योंकि अब अगर कुरआन से ज़ेर, ज़बर, पेश निकाल दिया जाये तो हर मुसलमान कुरआन को सही पढ़ नहीं सकता, लिहाज़ा ये नई बिदअत वाजिब हुई और अब कियामत तक कुरआन इसी हाल में रहेगा की ना ज़बर कम होगा ना बढेगा,

**2 - बिदअते मोहर्रमा-** जिस पर अमल करना हराम है गुनाह है

**खुलासा** - यानि दीन में कोई नई ऐसी बात पैदा करना जिससे वाजिब छूट जाये, यानि वाजिब को मिटाने वाला काम,

**3- बिदअते मुस्तहब्बा-** जिन पर अमल करना सवाब है और छोड़ना गुनाह नहीं, जैसे दीनी मदरसों और मुसाफिर खानों की तामीर

**खुलासा-** वह काम जिसे मुसलमान सवाब जाने और नेक नियत से सवाब की नियत से करें, जैसे महफिले मीलाद यानि हुज़ूर के वक़्त में ना थी अब है, जाइज़ है कि किसी सुन्नत को मिटाती है ना किसी वाजिब के खिलाफ

**4- बिदअते मकरूह-** वह काम जिस पर अमल से कोई सुन्नत छूट जाये,

**खुलासा-** जैसे मस्जिदों और कुरआन की जिल्दों को नक्रशो निगार से मुज़य्यन

करना (और ये कराहत शवाफे के नज़दीक है, हमारे नज़दीक मुस्तहब है) यानि मस्जिद की दीवार और कुरआन की जिल्द पर नक्श हुज़ूर के वक़्त में नहीं थे, अब हैं, और ये दीन में नया काम है,

**5 - बिदअते मुबाह-** वह नए काम जिसे करना सवाब ना हो और ना करना कुछ गुनाह हो,

**खुलासा-** जैसे आज के दौर में कई क्रिस्म के खाने खाना फज़ असर की नमाज़ के बाद मुसाफ़ह करना बिरयानी खाना, वगेरा ये सब भी बिदअत ही है.

**वहाबी अपने फतवे की ज़द में**

अब देखो इन नमक हरामो को कहते हैं, हर नया काम गुमराही है, बिदअत है, ख़तम होना चाहिए जबकि खुद इनका अमल 1000 बिदअत पर होते हैं,

ख़तम कर देना चाहिए

\* वहाबी पढाई के लिए मदरसे खोलते है हुज़ूर के वक़्त में नहीं थे वहाबी के मदरसे बिदअत हैं,

\* वहाबी मुफ़्ती बनने के लिए न्हव, सर्फ़, जैसी किताबे सीखते है, हुज़ूर के वक़्त में ऐसा कुछ नहीं था.

\* वहाबी अपनी शादीओ में 10 रंग के खाने पकवाते हैं, अक्सर खाने बिदअत हैं, की हुज़ूर के ज़माने में बिरयानी खाना साबित नहीं, लिहाज़ा बिरयानी बिदअत है मगर फ़्री की मिल जाये तो खा लेते है नियाज़ की मिल जाये तो बिदअत याद आती है

\* वहाबी दो वक़्त खाना खाता है जबकि हुज़ूर से एक वक़्त का खाना सुन्नत है और दो वक़्त का खाना और पेट भर के खाना बिदअत है खुद हज़रत आइशा ने फ़रमाया- दीन में पहली बिदअत पेट भर के खाना हुई, इससे मालूम हुआ

की खुद वहाबी दो वक़्त में पेट भर भर के खा कर, नई नई चीज़े खा कर बिदअत पर अमल कर रहा है -

\* वहाबी आज हिंदी उर्दू बोलता है हुज़ूर ने कभी अरबी के सिवा कुछ ना बोला लिहाज़ा जो काम हुज़ूर से साबित नहीं या उनके वक़्त में नहीं तो हराम है लिहाज़ा वहाबी उर्दू बोल कर खुद बिदअती साबित हो रहा है

\* वहाबी की मस्जिद में भी मीनार होती है, टाइल्स भी होती है जबकि दीन में नई बिदअत हुज़ूर के वक़्त में नहीं थी बाद में पैदा हुई, इसी तरह इनकी मस्जिद में A/C का लगवाना बिदअत है

\* वहाबी आज हवाई जहाज़ का इस्तिमाल हज पर जाने के लिए करता है, और वो भी काफिर का बनाया जहाज़ जबकि हुज़ूर के सफर ऊँठ वगेरा पर साबित है, वरना सफर पैदल भी, तो वहाबी भी ऊँठ पर बैठ कर हज पर क्यों नहीं जाता, फिर फ़ोन, कंप्यूटर से दीन फैलाना भी बिदअत है, हुज़ूर ने कभी दीन इन्टरनेट से नहीं फैलाया फिर ये नई बिदअत पर अमल करके खुद जहन्नम का कुत्ता साबित हो रहा है या नहीं ?

जितना लिखा जाये कम है, अगर बिदअत के वही मअना लिए जाये जो वहाबी लेता है की "हर बिदअत गुमराही है" तो निज़ामे दुन्या थम जाये **इमाम शाफ़ई** (رضي الله عنه) फरमाते हैं-

वह नई चीज़ जो कुरआन ओ हदीस अक़वाल ओ अफ़वाले सहाबा या इज्मा ए उम्मत के मुखालिफ हो, वह गुमराही है और जो अच्छी अच्छी नई चीज़े इनमे से किसी के मुखालिफ ना हो वह गुमराही नहीं.

देखें हाशिया मिश्कात जिल्द:1 सफ़ह:27, इसी तरह हज़रते उमर फ़ारूके आज़म ने तरावीह की नमाज़ जमाअत के साथ की और फ़रमाया -

(رضي الله عنه) अब्दुलाह बिन मसऊद (यह अच्छी बिदअत है) نِعَمَتِ الْبِدْعَةُ هَذِهِ

اِذَا رَأَى الْمُسْلِمُونَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللَّهِ حَسَنٌ - से मरवी-

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ أُمَّتِي عَلَى الصَّلَاةِ - (मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी)

मिरातुल मफ़ातीह शरह मिशकातुल मसाबीह जिल्द:1 सफ़ह:414 पर

लिखते हैं, - قُبِدَ الْبِدْعَةُ بِالصَّلَاةِ لِإِخْرَاجِ الْبِدْعَةِ الْحَسَنَةِ -

(बिदअते दलालती की कैद इस हदीस में इसलिए लगाई गई ताकि बिदअते हसना को इससे निकाल दें, क्योंकि बिदअते हसना गुनाह नहीं)

मिशकात जिल्द:1 सफ़ह:33 पर हुज़ूर का फरमाने आलीशान है-

مَنْ سَنَّ فِي الْإِسْلَامِ سُنَّةً حَسَنَةً فَلَهُ أَجْرُهَا وَأَجْرُ مَنْ عَمِلَ بِهَا مِنْ بَعْدِهِ مِنْ غَيْرِ أَنْ يَنْقُصَ مِنْ أَجُورِهِمْ شَيْءٌ وَمَنْ سَنَّ فِي الْإِسْلَامِ سُنَّةً سَيِّئَةً كَانَ عَلَيْهِ وِزْرُهَا وَوِزْرُ مَنْ عَمِلَ بِهَا مِنْ بَعْدِهِ مِنْ غَيْرِ أَنْ يَنْقُصَ مِنْ أَوْزَارِهِمْ شَيْءٌ

(जो इस्लाम में कोई अच्छा तरीका निकाले तो उसके लिए सवाब है और जो लोग उसके बाद उस अच्छे तरीके पर अमल करेंगे, उनके सवाबो का अज़्र भी उसको मिलेगा, बगैर इसके के उन लोगों के सवाबो में कोई कमी हो. जो इस्लाम में कोई बुरा तरीका निकाले तो उस पर उसका गुनाह है, और तमाम उन लोगो के गुनाहों का वबाल भी इस पर होगा जो इसके बाद इस बुरे तरीके पर अमल करेंगे, बगैर इसके के उन लोगों के गुनाह में कोई कमी हो)

खुलासा ए कलाम-

इन दलाइल से ये साबित हुआ की जो हदीस में है की “كُلُّ بَدْعَةٍ ضَلَالَةٌ”

यानि हर बिदअत गुमराही है- इससे मुराद दीन में वे नया काम है जो कुरआन हदीस के खिलाफ या सुन्नत को मिटाने वाला हो, मगर वहाबी जो आधी हदीस पेश करते हैं या नई बातें दीन में पैदा करते हैं, इसके बारे में खुद हुजूर ने फ़रमाया- **مَالِم تَسْمَعُوا اَتَمُّ وَلَا اَبَاؤُكُمْ** (जो तुमने और तुम्हारे बाप दादा ने कभी ना सुनी)

ये तो हुआ बिदअत पर मुख़्तसर कलाम अब असले सुवाल की जानिब - कहा गया - **जुमुआ मुबारक कहना बिदअत है?**

अगर मान भी लिया जाये की ये बिदअत है, तो सुवाल ये है की कौन सी बिदअत है, क्योंकि वहाबी बस बिदअत का एक ही मअना जानता है, और वो भी गुमराही, जैसे खुद गुमराह है इसी तरह-

अगर किसी ने किसी मुसलमान को जुमुआ मुबारक कह दिया, तो इसमें कौन सा गुनाह हुआ, कौन सी बात कुरआन हदीस के खिलाफ हुई, कौन सा वाजिब तर्क हुआ, क्या सुन्नत छूट गई, कौन सा काम सुन्नत के खिलाफ हो गया, मैं कहता हूँ (अल्लाह ही की तौफ़ीक़ से) की किसी मुसलमान को जुमुआ की मुबारकबाद देना ना सिर्फ़ बिदअत बल्कि कुरआन ओ हदीस पर अमल है सवाब का काम है देखें कुरआन में अल्लाह अपनी नेअमत याद दिलाता है, और नेअमत पर शुक्र को कहता है, लिहाज़ा जिस मुसलमान के लिए जुमुआ नेअमत है वो अल्लाह का शुक्र अदा करता है जिसे ये दिन नसीब हुआ की जुमुआ आम दिनों का सरदार है इसमें हर नेक आमाल पर सवाब आम दिनों के मुक़ाबले में ज़्यादा दिया जाता है - खुद कुरआन में अल्लाह की नेअमतों के बारे में है- **وَلِئِنْ تَعَدُّوا نِعْمَةَ اللَّهِ** (और अगर तुम अल्लाह की नेअमते गिनो) (यानि अल्लाह की नेअमत बहुत है जुमुआ भी उम्मत के लिए एक नेअमत है)



जब कोई किसी को जुमुआ मुबारक कहता है ज़ाहिर है की वो सलाम भी करता होगा, लिहाज़ा सलाम करने की सुन्नत पर अमल इस मुबारकबाद से हो गया, अगर ये मुबारकबाद देने वाला आपके सामने है, तो ज़रूर मुबारकबाद मुस्कुरा कर कही जायेगीं, ना की दुश्मनी में, तो मुस्कुराने की सुन्नत पर भी अमल हो गया ऐन मुमकिन है की दोनों एक दुसरे से मुसाफह भी कर लें, तो मुसाफह की सुन्नत भी अदा हो जाएगी, और हमने बाद जुमुआ मुबारकबाद दे कर गले मिलते हुए भी मुसलमानो को देखा है तो खुशी में गले मिलना सुन्नत है लिहाज़ा ये सुन्नत पर भी अमल होगा, हदीस में फ़रमाया - मुसलमान का दिल खुश करना बेहतरीन सदक़ा है- अब देखें जब कोई किसी को मुबारकबाद देता है तो उसके चेहरे पर खुशी आती है जो दिल के खुश होने की अलामत है लिहाज़ा मुसलमान को खुश करना सदक़ा हुआ- इसी तरह इस हदीस पर भी अमल हुआ, फिर बाज़ लोग आखिर में दुआ (जज़ाकल्लाह) कह देते है, इस पर कुरआन पर भी अमल हुआ की अल्लाह दुआ मांगने वालो को पसंद करता है- और जो जुमुआ को अपने लिए नेअमत ना जाने उसके लिए कुरआन में है- **يَعْرِفُونَ نِعْمَتَ اللَّهِ ثُمَّ يُنْكِرُونَهَا** (अल्लाह की नेअमत पहचानते है फिर उसके मुनकिर होते हैं)

लिहाज़ा मुसलमान के साथ दुआ, सलाम, खुशी और नेअमत का इज़हार करते हुए जुमुआ मुबारक कहना दुरुस्त है, फ़रमाया बरेली के इमाम ने- इन वहाबियो के बारे में जिन्हें हर काम हराम दिखता है - कहते है, तुफ़्र नजदियत ना कुफ़्र ना इस्लाम सब पे हर्फ़ काफिर इधर की है, ना उधर की अधर की है

والله اعلم ورسوله اعلم، عز وجل صلى الله تعالى عليه وسلم

**सुवाल:4 (1525 जिल्द:3)**

4 इमाम हैं, लेकिन हम हनफ़ी क्यों हैं, इमाम अबु हनीफ़ा को ही क्यों फ़ॉलो करते हैं हम सब और उनका बताया गया तरीक़ा क्यों? जब के कई सहाबा के क़ौल से और हदीसों से भी हम हर तरीक़ा इख़्तियार कर सकते हैं, ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं वो किसी इमाम को नहीं मानते और उनके इमाम रसूलुल्लाह (صلی الله علیه وآله وسلم) हैं, तो इसके मुताल्लिक़ आप क्या कहते हैं, ?  
**I am also hanafi, मुफ़्ती सहाब जवाब इनायत फरमाएं.**

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

इमाम की तक्लीद करना ही हमारे लिए सवाब है

वहाबी के हज़ारो सुवाल का ये एक वाहिद जवाब है

अक्सर देखा गया है की वहाबी हमारी सीधी-साधी अवाम से चंद सुवाल ज़्यादा करती है फिर इन वहाबी की बेवकूफ़ी तो देखो की अवाम से पूछती है, कभी आलिम से पूछते ही नहीं, गोया अवाम कोई मुफ़्ती हो? इससे इनके कम इल्मी का पता चलता है फिर अवाम तो अवाम है उसे कुरआन हदीस से कोई दलील कहाँ दे मिलेगी, और उलमा ने अपनी किताबों में कुरआन हदीस की दलील पेश की और बाज़ ने दलाइल ए अक़लिया भी दी, मगर सीधी अवाम उसे समझ नहीं पाती तो ज़रूरत महसूस होने लगी की इसका जवाब ऐसा दिया जाये की दोबारा इस मसअले पर कलाम करने की हाजत ना रहे, लिहाज़ा हम इसका जवाब दो फसल में देंगे, **जवाब 1** में (जवाबे आवाम) इस जवाब में हम आसान तरीके से सुन्नी अवाम को तक्लीद का जवाब बताएँगे ताकि वो वहाबी को जवाब दे, जो की एक ख्याली मुनाज़रे की शक़ल में होगा **जवाब 2** (जवाब खास) कुरआन से और कुतुब से तक्लीद की दलील, पहले

जवाबे आम पेश किया जाता है,  
 वो भी मसालेदार, तेज़ नमक दे साथ  
 वो कहते थे ना बरेली के अहमद रज़ा की...  
 दिले दुश्मन को रज़ा तेज़ नमक की धुन्न है

### जवाबे आवाम फि तक्लीदे इमाम-

क्योंकि हिन्दुतान में अक्सर मुसलमान सुन्नी हनफ़ी है इसका मतलब होता है की हम इमामे आजम अबू हनीफ़ा की तक्लीद करते हैं, शरई इस्तिलाह में "तक्लीद ये है कि" – "किसी के क़ौल, फैल को अपने लिए हुज्जत मान लेना और शरई एतबार से खुद पर लाज़िम जानना, क्योंकि मुजतहिद की कुरआन ओ हदीस में गहरी नज़र होती है"

एतराज़ किया जाता है- की जब कुरआन, हदीस मौजूद है तो तक्लीद करना हराम और शिर्क है.

जवाब दिया जाता है- कि कुरआन हदीस से हुक्म निकालना हर एक के बस की बात नहीं, लिहाज़ा ऐसे शख्स की बात मान ली जाये जो कुरआन हदीस का ज़्यादा इल्म रखता है, क्योंकि कुरआन की हर आयत का अगर वही मतलब निकाल लिए जाये जो ज़ाहिर है तो बाज़ सूरतों में कुफ़ हो जाता है, क्योंकि कुरआन में तो "अल्लाह का चेहरा" "अल्लाह का हाथ" मौजूद है इसी तरह हदीस में "अल्लाह का हँसना" भी मौजूद है तो हर शख्स इसका सही मतलब और मफ़हूम नहीं निकाल सकता लिहाज़ा किसी बड़े इमाम की बात मान ली जाये क्योंकि कुरआन में इनकी गहरी नज़र होती है,

वहाबी से पूछा गया "क्या आपके घर में सभी लोग कुरआन ओ हदीस से खुद

मसअले निकाल लेते हैं”

**वहाबी बोला-** नहीं हम अपनी मस्जिद के इमाम से पूछ लेते हैं,

**मैंने कहा-** यही तो तक्लीद है की खुद नहीं देखते इमाम से पूछते हो,

**वहाबी बोला-** हमारा इमाम कुरआन ओ हदीस से बताता है इसलिए उसकी मानते हैं,

**मैंने कहा -** इमामे आजम साइंस की किताब से नहीं बताते वो भी कुरआन ओ हदीस से बताते है फिर?

**वहाबी बोला-** मगर किसी की बात को बेदलील मान लेना जाइज़ नहीं

**मैंने कहा -** जब तू अपने इमाम से कोई बात पूछता है और उसका जवाब आने पर मान लेता है या बुखारी खरीद कर उसमे खुद चेक करता है की सही बताया या नहीं,

**वहाबी बोला-** जो इमाम कहता है मान लेते हैं बुखारी में खुद नहीं तलाशते

**मैंने कहा -** यही तो तक्लीद है की जो इमाम कहे, मान लो खुद तलाश ना करो क्योंकि इमाम कुरआन हदीस से ही बताता है

**वहाबी बोला-** हर चीज़ कुरआन हदीस से लेते है, इमाम की बात नहीं मानते

**मैंने कहा -** जब सब हुक्म कुरआन हदीस में है तो घर में कुरआन हदीस खरीद लो इमाम के पास जा कर काफिर क्यों बनते हो खुद क्यों नहीं देख लेते,

**वहाबी बोला-** हर शख्स को कुरआन हदीस में इतनी आसानी से मसाइल नहीं मिलते इसलिए इमाम की मदद लेते हैं,

**मैंने कहा -** यही तो तक्लीद है की इमाम की मदद ले ले हर शख्स आलिम नहीं ना खुद मसअला निकाल सकता है,

फिर मैंने कहा, ऐ वहाबी इमाम से तू पूछे, इमाम पर यकीन तू करे, किताब

चेक तू ना करे, इमाम की बात बे-देखे मान जाये, फिर भी तू मुशरिक नहीं होता जबकि ये सारी बातें ही तो तकलीद हैं, हक तो जब था की तेरी खबीस क्रोम को चाहिए था की जो मसअला पेश आये खुद बुखारी में ढूंढे, बच्चा हो या औरत खुद कुरआन से मसअला निकाल ले, किसी इमाम पर भरोसा क्यों करे, (और बुखारी की किताब को मान लेना भी तो इमाम बुखारी की तकलीद हुई) किसी इमाम से ना पूछे ना उसकी माने, जब ही तू ग़ैर मुकल्लिद होगा, वरना तू भी अपने इमाम का मुकल्लिद हो जायेगा, और मुशरिक भी.

सुन्नी मुसलमान को जान लेना चाहिए की आपको इमामे आजम की तकलीद (या किसी भी इमाम की) वाजिब है, और आलिम से मसअला पूछना फ़र्ज़, जब आप पर नमाज़ फ़र्ज़ हुई आपने उसका इल्म सीख लिया, फिर रोज़े फ़र्ज़ हुए तो उसका इल्म सीखा, और जब आप पर ज़कात फ़र्ज़ हुई तो उसका, ठीक वैसे ही हराम हलाल का और ज़रूरियाते दीन का इल्म आपने सीख लिया, अब रहा इल्मे मुनाज़रा यानि किसी बदमज़हब से बेहेस करके अपनी बात को साबित करना, और ये इल्म हर मुसलमान पर फ़र्ज़ नहीं, जब कुरआन कहता है की शैतान की बात ना सुनो तो आप वहाबी से सुनते ही क्यों हो की हुज़ूर ने क्या किया, क्या नहीं किया, क्या आपको सुन्नी आलिम काफी नहीं, क्या आपको मसलके अहमद रज़ा काफी नहीं, अगर यही बस है, तो आपको वहाबी के एतराज़ से परेशान होने की ज़रूरत नहीं,

हर सुवाल का जवाब देना ज़रूरी नहीं - आज कल फ़ैशन चल गया है की जब वहाबी कोई एतराज़ करता है तो अवाम उस जवाब की तहकीक में लग जाती है, और बिला वजह अपना वक्त बर्बाद करती और कभी गुमराह भी हो जाती है, बाज़ चीज़ों को बे दलील मान लेना ठीक होता है, और इसी में ईमान की

हिफाज़त है,

इमाम फखरुद्दीन राज़ी (رضي الله عنه) और शैतान - कुरआन की तफ़्सीर लिखने वाले इमाम, इमाम फखरुद्दीन राज़ी ने जब वफ़ात पाई तो आपकी क़ब्र में शैतान आया और बोला की "अल्लाह एक है आप इसकी दलील दो" आपने कुरआन से 360 के करीब दलील दी की अल्लाह एक है मगर शैतान ने आपकी हर दलील का रद्द करके अपनी दलील पेश कर दी, ये सारा मंज़र आपके पीर साहिब एक दरया के किनारे वुजू करते हुए देख रहे थे जब आपने देखा की मेरे मुरीद की सारी दलील शैतान ने रद्द कर दी और शैतान का वही सुवाल था की "अल्लाह को एक साबित करना है" तो आपके पीर ने वहीं से फ़रमाया (मफ़हूम) "ऐ फखरुद्दीन शैतान को क्यों दलील देता है की अल्लाह एक है, बोल क्यों नहीं देता की मैं बग़ैर दलील के ही अल्लाह को एक मानता हूँ" और इस तरह आपके पीर ने आपकी मदद फरमाई, इस वाक़ये से सुन्नी मुसलमानो को इबरत लेनी चाहिए की वहाबी की हर एतराज़ की दलील मत ढूँढो, कोई कहे रफय़दैन की दलील दो, कोई कहे तक़लीद की दलील दो, आप कह दो, हम पर उलामा की पैरवी लाज़िम है, लिहाज़ा हमें दलील की हाज़त नहीं दलील आप आलिम से लो, फिर आलिम अपना काम, खुद कर देगा दलील देना आप लोगो का काम नहीं, आलिम का काम है, लिहाज़ा अवाम को चाहिए की वहाबी के हर सुवाल पर जवाब ना दे उसे शैतान जाने और आपसे दूर रखे,

(कुरआन इसी का हुक्म देता है की, जब याद आये तो शैतान के पास ना बेठो)

जवाबे ख़वास फि हिफाज़ते ईमान

दिले दुश्मन को रज़ा तेज़ नमक की धुन्न है

अल्लाह फरमाता है- **सूरह बनी इसराइल आयत 71**

"जिस दिन हम हर जमाअत को उसके इमाम के साथ बुलाएँगे"

इस आयत की तफ़सीर में मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी फरमाते हैं-  
नुरूल इरफ़ान फि तफ़सीर उल कुरआन में

"इस आयत से मालूम हुआ की दुनिया में किसी सालेह को अपना इमाम बना लेना चाहिए शरीअत में तक्लीद करके और तरीक़त में बैअत करके, ताकि हथ्र अच्छो के साथ हो, इस आयत में बैअत, मुरीद, तक्लीद, सबका सुबूत है" और फरमाता है अल्लाह कुरआने पाक में (सूरह नहल अयात 43)

"तो ऐ लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"

इस आयत की तफ़सीर में- तफ़सीर सिरातुल जिनान फि तफ़सीर उल कुरआन जिल्द:5 सफ़ह:321 पर है

"याद रहे ये आयते करीमा तक्लीद के जवाज़ (जाइज़ होने) बल्कि हुक्म पर भी दलालत करती है"

(यानि अल्लाह कुरआन में हुक्म दे रहा है इल्म वालो से पूछना है, खुद अक़ल नहीं लगानी)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती शाफ़ई (رضي الله عنه) फरमाते हैं, -

"इस आयत से उलामा ने फुरुई मसाइल में आम आदमी के लिए तक्लीद के जाइज़ होने पर इस्तदलाल फ़रमाया"

आलाहज़रत इमाम इश्क़ ओ मोहब्बत मुफ़्ती अहमद रज़ा बरेलवी फरमाते हैं फ़तावा रज़विया जिल्द: 29 सफ़ह:390 पर है

(मुतलक़ान) तक्लीद फ़र्जे क़तई है अल्लाह फरमाता है -

فاسألواهل الذكر ان كنتم لا تعلمون

"तो ऐ लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 21 सफ़ह:582 पर है

"वुजूबे तक़लीद में नस है"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 27 सफ़ह:644 पर है

"तक़लीदे शख़्सी को शिर्क या हराम मानने वाले, गुमराह, और मोमिनो के रास्ते के अलावा पैरवी करने वाले हैं"

उलामा ने तक़लीद करने को वाजिब लिखा है और, ना करना हराम, और जो तक़लीद नहीं करते शैतान के रास्ते पर है, और हर आदमी कुरआन हदीस नहीं समझ सकता, और सूरह फातिहा में अल्लाह से हर मुसलमान ये दुआ करता है "हमें सीधा रास्ता चला, रास्ता उनका जिन पर तूने अहसान किया" और फिर आप देखेंगे की अल्लाह के जितने औलिया गुज़रे सभी मुक़ल्लिद थे, वरना मुजतहिद किसी ने तक़लीद का ना इनकार किया ना तर्क की, सुन्नी मुसलमानो के लिए इतना ही काफी है की, ग़ौसे आज़म, ग़रीब नवाज़, जैसे बा-करामत वली भी किसी ना किसी इमाम के मुक़ल्लिद हुए भला ये गुमराही का रास्ता कैसे हुआ? क्या कोई शख्स गुमराही के रास्ते पर चल कर वली बन सकता है, ये आपको सोचना है,

अल्लाह से दुआ है की, मुसलमान को खुद कुरआन हदीस में अपनी अक़ल चलाने से महफूज़ रखे और उनका रास्ता चलाये जिन पर तूने एहसान किया और फितना ए वहाबियत से सुन्नियत की हिफाज़त फरमाये, उम्मीद करता हूँ ये जवाब आम सुन्नी के लिए वहाबी के हज़ारों सवालात पर काम आएगा,  
والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب



**सुवाल:5 (1507, जिल्द:3)**

क्या मज़ार शरीफ पे जा के हमे वसीलाह लेना सही है, क्या इनसे मदद मांगना शिर्क है, जवाब का मुंतज़िर कुरआन हदीस से जवाब दीजिये ।

जवाब : **بسم الله الرحمن الرحيم**

किसी नबी, वली, नेक, सालेह को अल्लाह की बारगाह में वसीला बनाना जाइज़ और कुरआन हदीस से साबित है कुरआन में फरमाता है तुम्हारा रब सूरह मईदा आयत 35 में

"ऐ ईमान वालो, अल्लाह से डरो और उसकी तरफ वसीला ढूंढें"

और फरमाता है अल्लाह सूरह बक्रह आयत 89 में "और जब उनके पास अल्लाह की वह किताब (कुरआन) आई जो उनके साथ वाली किताब (तोरेत) की तस्दीक फरमाती है, और इस से पहले वह उसी नबी के वसीले से काफिरों पर फतह मांगते थे, तो जब तशरीफ़ लाये वह जाने पहचाने उस से मुनकिर हो बैठे, तो अल्लाह की लानत मुनकिरों पर"

हज़रत उस्मान बिन हनीफ (رضي الله عنه) को हुज़ूर (عليه السلام) ने ये दुआ, माँगने का हुक्म दिया: ऐ अल्लाह में तेरे नबी के वसीला जलील से तेरी तरफ तवज्जो करता हूँ, या रसूलल्लाह में आपके वसीले से अपने रब की तरफ अपनी हाजत के बारे में मुतवज्जह हूँ, (तिर्मिज़ी शरीफ)

हज़रत अली (رضي الله عنه) फरमाते हैं: "मैंने नबी (عليه السلام) से सुना:

अब्दाल शाम में होते हैं, ये 40 मर्द हैं, इनमे से जब कोई एक मरता है तो खुदा उसकी जगह दूसरा मुक़र्रर कर देता है, इनके वसीले से बारिश होती है, इनके वसीले से जंग में फतह मिलती है, और इनके वसीले से शाम वालो पर

से अज़ाब दफ़ा किया जाता है" मिश्कात

सय्यिदुना इब्ने उमर (رضي الله عنه) से रिवायत की रसूलुल्लाह (صلى الله عليه وآله وسلم) ने फ़रमाया: "जब मोअज़्ज़िन अज़ान देता है तो अज़ान का जवाब दो, फिर मुझ पर दुरूद पढ़ो, और फिर मेरे वसीले से अल्लाह से दुआ करो"

मुस्लिम किताबुस सलात,

इमाम शाफ़ई (رضي الله عنه) फरमाते हैं - "मुझे जब कोई हाजत पेश आती है मैं दो रकाअत नमाज़ अदा करके इमामे आज़म अबु हनीफा के मज़ार पर जा कर उनके वसीले से दुआ मांगता हूँ, अल्लाह मेरी हाजत पूरी कर देता है"

खैरात-उल-हिस्सान

फ़तावा रज़विया जिल्द:9 सफ़ह: 523 पर है

"साहिबे मज़ार की रूह को अल्लाह की बारगाह में अपना वसीला क़रार दे"

इन दलाइल से वसीला साबित है की वसीला ना कोई नई चीज़ ना आज का काम, और इस तरह वली से मदद मांगना यहाँ तक की वफ़ात बाद भी मदद मांगना जाइज़ है और वो मदद करते हैं,

फतावा अल-रमी फि फुरु अल-फिक्रहे शफाई में है

انّ الاستغاثة بالانبياء والمرسلين والاولياء والعلماء الصّالحين جائزة وللانبياء والمرسلين والاولياء والصالحين اغاثة بعد موتهم

"बेशक़ अम्बिया ओ मुरसलीन औलिया व उलामा से मदद मांगनी जाइज़ है और वह बाद इन्तिक़ाल भी मदद फरमाते हैं"

फतावा जमाल बिन अब्दुल्लाह में है

الاستغاثة بالاولياء ونداؤهم والتوسل بهم امر مشروع وشيئ مرغوب لاينكره الامكابر اومعاند وقد حرم بركة الاولياء الكرام

"औलिया से मदद मांगना और उन्हें पुकारना, और उनके साथ तवस्सुल करना, शराअ में जाइज़ है, और पसंददीदा चीज़ है, जिसका इनकार ना करेगा मगर हट-धर्म यह साहिबे इनआद और बेशक वह औलिया किराम की बरकत से महरूम है"

सय्यिदुना मूसा अबु इमरान (رضي الله عنه) के बारे में है

كان اذا ناداه مريده ، اجابه من مسيرة سنة واكثر

"जब उनका मुरीद जहाँ कहीं से उन्हें निदा करता है, जवाब देते हैं, चाहे साल भर की दूरी पर होता या उससे भी ज़्यादा"

फ़तावा रज़विया जिल्द:29 सफ़ह:554 पर है

बेशक अम्बिया मुरसलीन औलिया से मदद मांगना जाइज़ है और वह बाद इन्तिक़ाल भी मदद फरमाते हैं,

फ़तावा फ़ैज़ुरसूल जिल्द: 2 सफ़ह: 483 पर है

इमाम ग़ज़ाली (رضي الله عنه) फरमाते हैं, - "जिससे उसकी ज़िन्दगी में मदद मांगी जा सकती है उससे उसके विसाल के बाद भी मदद मांगी जा सकती है"

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

सुवाल:6 (जिल्द:1, 445)

या अली अल-मदद, या ग़ौस अल-मदद, या पीर अल-मदद, ये सब कहना कैसा, अल्लाह के सिवा किसी और से मदद मांगना शिर्क है क्या ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

ये सब कहना जाइज़ है और अल्लाह के अलावा ग़ैर से मदद मांगना शिर्क नहीं, जबकि कोई ये अक़ीदा ना रखे की खुद अल्लाह मदद नहीं करता या

नहीं कर सकता तभी ग़ैर से मदद मांगता हूँ, वरना शिर्क होगा, और मुसलमानों का हरगिज़ यह अक़्रीदा नहीं होता, बल्कि उनका अक़्रीदा यह होता है की इन अल्लाह वालों को अल्लाह ने मदद पर कुदरत बख़्शी है, और ये अल्लाह के दिए से मदद करते हैं, जो कुरआन हदीस से साबित है, कुरआन में तुम्हारा रब इरशाद फरमाता है - (कुरआन 2/153)

**"मदद तलब करो सब्र व नमाज़ से"**

जबकि नमाज़ भी खुदा नहीं, ग़ैर खुदा है और ना सब्र खुदा है और फरमाता है तुम्हारा रब (कुरआन 5/2)

**"आपस में एक दुसरे की मदद करो, भलाई और परहेज़गारी पर"**

इमाम बुखारी ने हज़रत अबु हुरैरा (رضي الله عنه) से रिवायत किया:

**"फ़रमाया हुज़ूर (عليه السلام) ने - सुबह और शाम और रात के कुछ हिस्सों में इबादत से मदद तलब करो"**

एक और हदीस में फ़रमाया - **"जब हाज़त तलब करो खूबसूरत चेहरे वालों से तलब करो"**

और फ़रमाया - **"जब तुम में से किसी की कोई चीज़ गुम हो जाये या राह भूल जाये और मदद चाहे और ऐसी जगह हो जहाँ कोई हमदम नहीं तो उसे चाहिए यूँ पुकारे 'ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो. ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो' 'ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो. ऐ अल्लाह के बन्दों मेरी मदद करो' की अल्लाह के कुछ बन्दे हैं, जिन्हें ये नहीं देखता वह उसकी मदद करेंगे (इस हदीस को तबरानी ने भी नक़ल किया)**

**इमाम ग़ज़ाली (رضي الله عنه) फरमाते हैं, - "जिससे उसकी ज़िन्दगी में मदद मांगी जा सकती है उससे उसके विसाल के बाद भी मदद मांगी जा सकती है"**

मज़िद दलाइल फतावा रज़विया जिल्द:21 सफह:310 से पढे.

والله سبحانه وتعالى اعلم

**सुवाल:7 (जिल्द:1 478)**

हम अज़ान के दरमियान या कहीं भी जब हुज़ूरे-अकरम सरकारे-दो आलम (صلی الله علیه وآله وسلم) का नाम आता है तो अपने हाथ की उंगलियों को बोसा क्यों देते है ?

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

हुज़ूर (عليه السلام) के नामे पाक पर अंगूठों के नाखून को बोसा दे कर आँखों से लगाना बिलकुल जाइज़ है, और इसके जाइज़ होने के लिए इतना काफी है की शरीअत में ये मना नहीं, और जो काम शरीअत में नाजाइज़ नहीं होता वो फि नफ़िसही जाइज़ होता है, ये फेल हदीस ज़ईफ़ से साबित है और उम्मत का इस पर अमल है, ज़ईफ़ हदीस अमल में लाइ जा सकती है और उम्मत के कसीर अमल से वो हसन भी हो जाती है

हदीस : सिद्दीके अकबर ने मोअज़्ज़िन को اشهد ان محمداً رسول الله कहते सुना (दुआ पढ़ी) और दोनों कलिमे (पर अंगुशत) के पोरी चूम कर आँखों से लगाए इस पर हुज़ूर (عليه السلام) ने फरमाया, जो ऐसा करे जैसा मेरे प्यारे ने किया उसके लिए मेरी शफ़ाअत हलाल हो जाएगी,

**फ़तावा रज़विया जिल्द:5 सफह:433 पर है**

**मुल्ला अली अल-कारी (رضي الله عنه) ने फ़रमाया:**

قلت واذا ثبت رفعه الى الصديق رضى الله تعالى عنه فيكفى للعمل به لقوله عليه الصلاة والسلام  
عليكم بسنتي وسنة الخلفاء الراشدين

सिद्दीके अकबर से इस फेल का सबूत अमल के लिए काफी है, हुज़ूर

(عليه السلام) ने फ़रमाया, मैं तुम पर लाज़िम करता हूँ अपनी सुन्नत और अपने खुलफ़ाए राशिदीन की सुन्नत"

तो सिद्दीके अकबर से किसी चीज़ का सबूत हुज़ूर (عليه السلام) से सबूत है  
 इमाम अस्कलानी ने फ़रमाया:- لا يلزم من كون الحديث لم يصح ان يكون موضوعا  
 हदीस का सही ना होने से मोज़ू (झूठा) होना लाज़िम नहीं

और मुहद्दिसीन ने फ़रमाया की ये हदीस सही नहीं, तो हदीस का सही ना होना उसके झूठे होने पर दलालत नहीं करता, सही नहीं, मसलन, हसन भी हो सकती है, और ग़रीब भी, और ज़ईफ़ भी, जिस तरह कहा जाये की "ये मिठाई बहुत बेहतर नहीं" तो इसका मतलब ये नहीं वो मिठाई ख़राब है, मतलब ये की ज़्यादा लज़ीज़ नहीं मगर मिठाई सही और खाई जा सकती है, और इस्तिमाल में लाना भी हलाल, ठीक उसी तरह ये अंगूठे चूमने की हदीस ज़ईफ़ है मगर इस पर अमल मुस्तहब है, बल्कि सिद्दीके अकबर की सुन्नत है, और मुसलमान इस पर अमल सवाब की और मुस्तहब की नियत से करता है  
 فیکتره کا ایک کرایدا ہے: - رَأَاهُ الْمُسْلِمُونَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللَّهِ حَسَنٌ -

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,)

बस कौन मुसलमान इस फेल को ताज़ीमन नहीं करता? हर कोई ये फेल सवाब और मुस्तहब की नियत से ही करता है

फ़तावा रज़विया जिल्द:5 सफ़ह:431 पर है

"और खुद अगर कोई दलील ख़ास ना होती, तो मना पर शरा से दलील ना होना, जवाज़ के लिए दलील काफी थी," (यानि अगर अंगूठे चूमने पर कोई दलील ना होती तो भी मना ना होना जाइज़ होने के लिए काफी था)

والله تعالى أعلم بالصواب

**सुवाल:8 (जिल्द:2, 625)**

**इमाम के पीछे किरअत मना है तो क्या इमाम को दोहराना भी इसी हुक्म के मातहत है ?**

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

**ये दलाइले काहिरा इस बात की निशानी है**

**जमाअत में किरअत बेचैन दिलों की परेशानी है**

मुझे सुवाल से इतना समझ आया की शायद साइल ये पूछना चाहता है की इमाम कोई सूरत पढ़े और मुक़तदी कोई और ये तो मना है, तो क्या एक जैसी सूरत भी दोहराना मना है ? यानि इमाम सूरह फ़लक़ पढ़े तो मुक़तदी भी उसके पीछे सूरह फ़लक़ पढ़ सकता है या नहीं (और अल्लाह बेहतर जानने वाला है) **जी नहीं**, इमाम के पीछे किरअत करना हनफी मज़हब में जाइज़ नहीं, फिर चाहे इमाम से जुदा सूरत पढ़ी या एक जैसी, दोनों सूरत में किरअत करने वाला पाया जायेगा, और बाज़ लोग इस वस्वसे में मुब्तिला है वो समझते हैं की, ये देखने के लिए की हमें सूरत सही याद है या नहीं, तो इस नियत से पढ़ सकता है, जबकि तिलावत मक़सूद ना हो मगर ये क़ौल बातिल महज़ है, की हालते नमाज़ में हर शख्स पर नमाज़ के तमाम फ़राइज़ ओ वाजिबात की इत्तिबाह लाज़िम है, और हर मुक़ल्लिद पर अपने मुत्तहिद की पैरवी फ़र्ज़, और इसके खिलाफ़ कुछ नहीं, फिर जब इमाम के पीछे चुप रहना वाजिब हुआ तो ज़रूर सूरत का पढ़ना क़सदन तरके वाजिब पाया गया, और तरके वाजिब हाराम के करीब होता है यानि ऐसा करने वाला सख़्त गुनाहगार और इस फेल से बाज़ रहना और तौबा करना भी लाज़िम तुम्हे जुबान देने वाला रब फरमाता है - **(सूरह:7 आयत 204:)**

"और जब कुरआन पढ़ा जाये तो उसे कान लगा कर सुनो और खामोश रहो की तुम पर रहम हो"

इस आयत की तफ़्सीर में खज़ाइनुल इरफ़ान में है

"इस आयत से साबित हुआ की जिस वक़्त कुरआन पढ़ा जाये चाहे नमाज़ में या नमाज़ के बाहर उस वक़्त सुनना और खामोश रहना वाजिब है"

तफ़्सीर दुर्रे मंसूर जिल्द:3 सफ़ह: 496 पर है

"हज़रत इब्ने अब्बास ने फ़रमाया ये आयत फ़र्ज़ नमाज़ों के बारे में है (यानि फ़र्ज़ नमाज़ के दौरान कुरआन पढ़ा जाये तो उसे कान लगा कर सुनो और खामोश रहो"

तफ़्सीर कुरतबी जिल्द:4 सफ़ह:410 पर है

"अहले तफ़्सीर ने इस पर इज्मा किया है की इसमें सुनने से मुराद नमाज़ में कुरआन का सुनना है"

तफ़्सीर तिव्यनुल कुरआन जिल्द:4 सफ़ह:515 पर है

"हज़रत इब्ने मसऊद ने नमाज़ पढ़ाई, उन्होंने लोगों को इमाम के साथ नमाज़ में कुरआन पढ़ते हुए सुना, जब वह नमाज़ से फारिग हुए तो उन्होंने कहा, अभी तक तुम्हारी समझदारी का वक़्त नहीं आया? क्या अभी तक तुम्हे अक़ल नहीं आई ? जब कुरआन पढ़ा जाये तो उसे ग़ौर से सुनो और खामोश रहो, जिस तरह तुम्हे अल्लाह ने हुक्म दिया, यह हदीस फुकुह ए अहनाफ की दलील है, की नमाज़ में इमाम के पीछे किरअत नहीं करनी चाहिए"

सिरातुल जिनान फि तफ़्सीरुल कुरआन जिल्द:3 सफ़ह:512 पर है

"इस आयत से इमाम के पीछे कुरआन पढ़ने की मुमानिअत साबित होती है और कसीर अहादीस में भी यही हुक्म फ़रमाया गया की इमाम के पीछे किरअत ना की जाये"



**हदीस 1 मुस्लिम:-** اذ صليتم فاقموا صفوفكم ثم ليؤمكم احدكم فاذا كبر فكبر واواذا قرأ فأنصتوا

(जब तुम नमाज़ में अपनी सफे सीधी करो फिर तुम में कोई इमामत करे और वह तकबीर कहे तुम भी तकबीर कहो और जब वह किरअत करे तुम चुप रहो)

**हदीस 2 तिर्मिज़ी** من صلى ركعة لم يقرأ فيها بام القرآن فلم يصل الا ان يكون وراء الامام

(जब कोई रकाअत बगैर सूरह फातिहा पढ़ी उसकी नमाज़ ना हुई, मगर जब इमाम के पीछे हो (तो हो गई))

**फतावा रज़विया जिल्द: 6 सफह: 240 पर है**

"हमारे उलामा ए मुज्ताहिदीन बिल इत्तिफ़ाक़ अदम ए जवाज़ के कायल हैं, और यही मज़हबे जम्हूरे सहाबा ओ ताबईन का है, यहाँ तक की साहिबे हिदाया ने दावा ए इज्मा ए साहब किया है"

अल्लाह इस मसअले पर क़ौमे सुन्नियत को क़ौमे वहाबियत से अमन बख़्शे  
امين هذا العلم عند واهب العلوم العالم بكل سرمكتوم

**सुवाल:9 (जिल्द:2 632)**

क्या फरमाते हैं, उलामा ए दीन व मुफतियाने शराअ मतीन इस मसअले में की सदल क्या होता है और सदल जो नमाज़ में मकरूह है तो क्या ये हुक्म नमाज़े जनाज़ा में भी है, बिल्हवाला इरशाद फरमाये-

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

**फतावा रज़विया जिल्द:76 सफह:386 पर है**

"असल ये है की सदल यानि पहनने के कपडे को बे-पहने लटकाना मकरूह तहरीमी है, और इससे नमाज़ वाजिबुल इअदह"

**दुर्रे मुख्तार जिल्द:1 सफह: 91 पर है**

کرہ سدل ثوبہ وکرہ کفہ ای رفعہ ولولتزاب کشمرم اوذیل

(कपड़े का लटकाना इसी तरह कपड़े का उठाना भी मकरूह है चाहे कीचड़ की वजह से हो जैसे कोई आदमी आस्तीन और दामन उठा ले)

حر الخیر الرملی ما یفید ان الکراۃ فیہ تحریمیۃ - 1/473 पर है

(शैख़ खैरुद्दीन रमली की इबारत इस बात की मुफीद है की इसमें कराहत तहरीमी है)

ये तो साबित हुआ की सदल मुतलक़न मकरूह तहरीमी है, अब इस तरफ भी एक नज़र की नमाज़े जनाज़ा में भी मकरूह है या नहीं, ग़ौर करने का मुक़ाम ये है की, असल में फुकहा ने सदल को मकरूह तहरीमी इसलिए क़रार दिया, की ये पहनने वाले कपड़े का इस्तिमाल ख़िलाफ़े मोअतद है, सभी पर रोशन है, जब चार दीवारी में पढ़ी गई नमाज़ मकरूह तहरीमी हो जाती है तो उसका दोहराना भी वाजिब क़रार पाता है, और ये भी रोशन की नमाज़े जनाज़ा मस्जिद में जाइज़ नहीं तो बीच सड़क पर इमाम का ख़िलाफ़े आदत कपड़े का इस्तिमाल क्योकर मकरूह ना होगा, मसलन इमाम का लोगो के सामने इस तरह कुर्ता डाल लेना की उसमे आस्तीन ना पहने तो ये नमाज़ (जनाज़ा हो या रुकू सुजूद वाली) वाजिब-उल-एआदा होती है, बल्कि इमामे अहले सुन्नत ने फतावा रज़विया में फ़रमाया "इसमें नीचे क़मीज़ और अदमे क़मीज़ का कोई दखल नहीं, सदल सदल है अगरचे क़मीज़ पर हो" और इमाम का ये क़ौल की "पहनने के कपड़े को बे-पहने लटकाना मकरूह तहरीमी है" साफ़ बिल क़ैद के साथ है, वरना जब रुकू सुजूद वाली नमाज़ का अलग हुक्म होता है तो उसे वाज़ेह किया जाता है, मसलन कहा गया "नमाज़ में वुजू का टूट जाना नमाज़ को तोड़ देगा" अब इसमें हर नमाज़ दाखिल हो गई, चाहे फ़र्ज़ हो नफिल या जनाज़ा, और उलेमाए अहनाफ कपड़े और बालो को मोड़ने, गुरसने, लपेटने, लटकाने, पर जो हदीस दाल लाते है यानि

امرت ان اسجد على سبعة اعضاء وان لاأكف شعرا ولا ثوبارواه الستة عن ابن عباس رضی الله تعالی عنهما

(मुझे सात आज्ञा पर सजदा करने का हुक्म दिया गया है, और इस बात का हुक्म है की बाल समेटू ना कपड़े उठाऊं, इस रिवायत को सिहा सित्ता ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास से रिवायत किया)

तो मुतक़लन दलील बनाते हैं, ना की नमाज़े जनाज़ा को इससे ख़ारिज करते है, फिर **दुरें मुख़्तार** ने फ़रमाया-**كل صلاة أدت مع كراهة التحريم وجب اعادتها** (हर वो नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की गई, उसका लौटाना वाजिब होता है,)

इनका “हर वो नमाज़” लिखना ही इस बात पर दाल है की इसमें रुकू सुजूद व गैर रुकू सुजूद सब शामिल हैं, वरना इस फ़िक्ह का क़ायदा इस तरह होता (हर वो रुकू सुजूद वाली नमाज़ जो कराहते तहरीमी के साथ अदा की गई, उसका लौटाना वाजिब होता है,)

और नमाज़े जनाज़ा की तक्रार जाइज़ नहीं लिहाज़ा अगर ये सूरत इस नमाज़ में पेश आई तो एक के पढ़ने से भी नमाज़ हो गई, चाहे दस लोगो ने सदल किया हो, सदल तो सदल अगर तमाम मुक़तदी भी हालते नमाज़े जनाज़ा में बे-बुज़ू हो जाएँ, तो भी इमाम की नमाज़ काफी है, इसी तरह अगर औरत की इमामत में नमाज़ जाइज़ नहीं, मगर नमाज़े जनाज़ा की इमामत औरत ने की तो भी नमाज़े जनाज़ा हो गई, दोहराने की हाजत नहीं, **फतावा आलमगीरी** में है

"इसके लिए जमाअत शर्त नहीं, एक भी पढ़ ले फ़र्ज़ अदा हो जायेगा"

**बहारे शरीअत जिल्द:1 सफ़ह:826** पर है

"इमाम ताहिर ना था तो नमाज़ फिर पढ़े, अगरचे मुक़तदी ताहिर हो, क्योंकि जब इमाम की नमाज़ ना हुई तो किसी की ना हुई, और अगर इमाम ताहिर था और मुक़तदी बिला तहारत तो नमाज़ दोहराई ना जाये"

“अगर औरत ने नमाज़े जनाज़ा पढाई और मर्दों ने इसकी इक़्तिदा की तो नमाज़ लौटाई ना जाये, अगरचे मर्दों की इक़्तिदा औरत के पीछे सही नहीं मगर औरत की नमाज़ तो हुई यही काफी है, और जनाज़े की नमाज़ की तक्रार जाइज़ नहीं,”

लिहाज़ा मुक्तदी से सदल सादिर हुआ तो नमाज़े जनाज़ा दोहराया ना जायेगा, अगर इमाम से हुआ तो नमाज़ वाजिबुल एआदा होगी,  
والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

सुवाल:10 (जिल्द: 2, 693)

हज़रत, हमारे आक्रा रहमतुल्लिल आलमीन की पैदाइश और वफात की तारीख बताएं तफ्सील से?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

पैदाइश -

हुज़ूर की पैदाइश 12 रबीउल अब्बल पीर शरीफ के दिन हुई

आला हज़रत इमामे अहले सुन्नत फतावा रज़विया जिल्द:26 सफह: 408 पर तहरीर फरमाते हैं

“रजब, सफर, रबीउल-अब्बल, मुहर्रम, रमज़ान, सब कुछ कहा गया और सही व मशहूर क़ौल रबी उल अब्बल है”

مشهور آئنت که در ربيع الاول بود - مدارिژون नबूवत जिल्द:2 सफह: 14 पर है -

(मशहूर यही है की विलादत बा सआदत माहे रबीउल अब्बल शरीफ में हुई)

अल मवाहीबुल लदुनिया में है: وهو قول جمهور العلماء

और वह जमहूर उलामा का क़ौल है) في شهر ربيع الاول على الصحيح (सही क़ौल के मुताबिक रबीउल अब्बल में है)

अल्लामा इब्ने ज़ौजी (رضي الله عنه) ने नसिमुल रियाज़ में नक़ल किया-

اتفقوا على انه ولد يوم الاثنين في شهر ربيع الاول

इस पर उलामा मुत्तफिक हैं, आप माहे रबीउल अब्बल पीर के दिन पैदा हुए) वफ़ात -

हज़रत अली (رضي الله عنه) से रिवायत है की फरमाते हैं:-

قال مات رسول الله صلى الله تعالى عليه وسلم يوم الاثنين لاثنتي عشرة مضت من ربيع الاول  
(हुज़ूर की वफ़ात रोज़ दो शम्भा (पीर) के दिन 12 रबीउल अब्बल को हुई)

शरह लादुनिया में अल्लामा ज़रकानी (رضي الله عنه) फरमाते हैं-

الذى عند ابن اسحق والجمهور انه صلى الله تعالى عليه وسلم مات لاثنتي عشرة ليلة خلت من شهر ربيع الاول

(हुज़ूर का विसाल शरीफ माहे रबीउल अब्बल की 12 तारीख को हुआ)

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب

सुवाल:11 (जिल्द: 2, 739)

हज़रत मुरीद के मायने क्या है, क्या किसी का मुरीद होना ज़रूरी होता है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

वैसे तो दीनी शागिर्द को भी लुगवी एतबार से मुरीद कहा जाता है मगर तरीक़त की इस्तिलाह में मुरीद कहते हैं किसी जामाए शराइत पीर के हाथ पर खुद को बेच देने का नाम, यानि किसी की गुलामी का पट्टा अपनी गर्दन में डालने का नाम ताकि कल बिना मालिक के आवारा शुमार ना किया जाये, और मुरीद नाम है अपने ज़ाहिर और बातिन की इस्लाह का नाम, और अल्लाह व रसूल की नज़दीकी हासिल करने का नाम, ईमान की हिफाज़त का नाम, आखिरत को सवारने का नाम, कल कियामत में किसी के साये में रहने का नाम, क़ब्र में आराम पाने का नाम, जो बिना वली ए कामिल की नज़र के, सब के लिए मुमकिन नहीं, दोनों जहाँ की भलाइयां और ईमान की हिफाज़त के लिए किसी कामिल पीर से मुरीद होना चाहिए-

मुरीद होना सुन्नत है कुरआने पाक में अल्लाह इरशाद फरमाता है-

(सूरह बनी इसराइल आयत: 17)

"जिस दिन हम हर जमाअत को उसके इमाम के साथ बुलाएँगे"

इस आयत की तफ़सीर में नुरुल इरफ़ान में है-

इससे मालूम हुआ की दुनिया में किसी नेक को अपना इमाम बना लेना चाहिए, शरीअत में तक्लीद करके और तरीक़त में बैत हो कर, ताकि हथ्र अच्छो के साथ हो, अगर सालेह इमाम ना होगा तो उसका इमाम शैतान होगा

और सहाबा ने हुज़ूर से बैत की जिसे कुरआन में इरशाद फ़रमाया-

(सूरह फ़तेह आयत 10)

"वह जो तुम्हारी बैत करते हैं, वह तो अल्लाह ही से बैत करते हैं, उनके हाथों पर अल्लाह का हाथ है"

इस आयत से मुरीद होने का साफ़ सबूत है

बाज़ औलिया किराम से भी साबित है जैसा की बायज़ीद बिस्तामी से भी रिवायत है -

روى عن ابى يزيد (رضى الله تعالى عنه) انه قال من لم يكن له استاد فامامه الشيطان

(जिसका कोई पीर नहीं उसका पीर शैतान है)

इसलिए बेहतर है किसी नेक शख्सियत से मुरीद हो जाना चाहिए ताकि गौसे आज़म के मुरीदों में शामिल होना का शरफ़ हासिल हो सरकार गौसे आज़म फरमाते हैं- "मेरा हाथ मेरे मुरीद पर ऐसा है, जैसे ज़मीन पर आसमान"

और फ़रमाया हुज़ूर गौसे आज़म (رضى الله عنه) ने -

मुझे एक दफ़्तर दिया जो हद्दे नज़र तक वसी है जिसमे मेरे मुरीदों के नाम है, कियामत तक और मुझे फ़रमाया गया ये सब हमने तुम्हे दे डाले"

बस इतना काफी है की मुरीद होने का कोई नुकसान नहीं बल्कि अमले नेक और रूहानियत में तरक्की ही होती है

والله تعالى اعلم وعلمه جل مجده اتم واحكم-

**सुवाल:12 (जिल्द: 2, 754)**

**हज़रत استوا على العرش पर अहले सुन्नत का मोकूफ़ और अक़ीदह बयान  
फरमाये जज़ाक अल्लाह**

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

तमाम तारीफ और इबादत सिर्फ अज़मत वाले अल्लाह के लिए, जिसने अक़ल बख़्शी की हम उसकी कुदरत के नज़ारों से उसकी शान का अंदाज़ा लगाए, और जिसने मना फ़रमाया की मुतशाबिहत में नज़र करना दिलो का टेडापन है, वो हँसता है, बन्दों को पकड़ता है, मगर मिस्ले बशर नहीं, हाँ ऐसा जैसा उसकी शान के लाइक, और लम्हा लम्हा दुरुदे अज़ीम सुल्ताने मदीना के लिए जिन्होंने फरमाया की अल्लाह की ज़ात में ग़ौर फ़िक्र मना है, ताकि हम गुमराही और वसवसों से बचे और दुरुद उनकी आल और असहाब पर बड़ी अज़मत वाले हैं,

कुरआन जिस मायने पर मुश्तमिल होता है उनमे से एक को मुतशाबिहत कहते हैं, इसका मतलब ये होता है की, उस अल्फ़ाज़ का आम लफ़्ज़ी मायने तो मालूम होता है, मगर मुराद नहीं, और ना उस मायने से ज़ाहिरी मुराद ले सकते हैं, बल्कि उस पर ईमान लाना ज़रूरी है, बाकी उसका मतलब अल्लाह व रसूल जाने ऐसा कुरआन में बहुत जगह हैं जिसका ज़िक्र नीचे आएगा, मगर हम अपने जवाब में उस आयत का ज़िक्र करेंगे जो साइल ने अपने सुवाल में पूछी है, इस का जवाब सारे मुताशबिहात के लिए हो जायेगा,

**सूरह अराफ़ पारा 8 आयत 54 में है**

**"बेशक़ तुम्हारा रब अल्लाह है, जिसने आसमान और ज़मीन 6 दिन में बनाये फिर अर्श पर इस्तवा फ़रमाया (जैसा उनकी शान के लाइक है)"**

**तफ़सीर दुर्रे मंसूर जिल्द:3 सफ़हः 289 पर है**

बिला शुबह तुम्हारा रब अल्लाह है, जिसमे पैदा फ़रमाया आसमानो और ज़मीन को 6 दिन में फिर मुतमक्किन हुआ अर्श पर (जैसा उसे ज़ेबा है)

इमाम इब्ने अबि हातिम (رضي الله عنه) ने, हज़रत काअब से ये क़ौल नक़ल किया है की, "अल्लाह ने जिस वक़््त मख़लूक़ को पैदा फ़रमाया तो इस तरह अर्श पर मुतमक्किन हुआ जिस तरह उसे ज़ेबा है"

उम्मुल मोमिनीन हज़रते सलमा ने "ثُمَّ اسْتَوَى عَلَى الْعَرْشِ" की तफ़्सीर में फ़रमाया की, इसकी कैफ़ियत अक़ल से बाहर है, اسْتَوَى ग़ैर मजहूल है इसका इक़रार करना ईमान है, इनकार करना कुफ़्र.

हज़रत राबिआ से पूछा गया कि रब के अर्श पर मुतमक्किन होने की क्या कैफ़ियत है, फ़रमाया اسْتَوَى ग़ैरे मजूल है और अल्लाह की जानिब से पैग़ाम है रसूल पर तुम लोगो तक पहुंचना लाज़िम है, और हम पर इसकी तस्दीक़ करना वाजिब है

हज़रत मालिक बिन अनस (رضي الله عنه) से मुतमक्किन की कैफ़ियत पूछी गई, तो फ़रमाया- "कैफ़ियत अक़ाल से वरा है, اسْتَوَى ग़ैरे मजूल है, इस पर ईमान लाना वाजिब है, इसके बारे में सुवाल करना बिदअत है और मुझे तो तेरे गुमराह होने का खौफ़ है "

استوا على العرش की तफ़्सीर के मुताल्लिक़

तफ़्सीरे मज़हरी जिल्द:3 सफ़ह:409 पर है,

इमाम बग़वी फ़रमाते हैं, मुताज़िला इस्तवा की इस तरह यानि ग़लबे से तवील करते हैं, मगर अहले सुन्नत फ़रमाते हैं- استوا على العرش, अल्लाह की सिफ़त है इसकी कैफ़ियत हमारे फेहम से बाहर है



और तफ़्सीरे नईमी में मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी फरमाते हैं (तफ़्सीरे नईमी जिल्द:8 सफ़ह:47)

"استوا" का माइना है बराबर होना, वह मायने यहाँ मुराद नहीं, क्योंकि बराबर तो छोटे बड़े जिस्म के साथ होता है, रब जिस्म से पाक है, और इस सूरत में इसके बाद "अला" ना आता, रही ये बात की استوا के क्या मायने है तो इसके बारे में तीन क़ौल हैं, 1. ये मुतशाबिहात से है इसके मायने रब के सुपुर्द करो, इस पर ईमान लाओ, तहक़ीक़ ना करो, यही तरीक़ा बहुत सलामती का है, 2. इससे मुराद ग़लबा फरमाना, 3. अहक़ाम जारी फरमाना"

बस इससे साफ़ है की हमें पहले क़ौल की पैरवी बेहतर है की ये मुतशाबिहात से है, यानि इसके मायने नहीं किये जायेंगे, इसीलिए आलाहज़रत इमाम अहले सुन्नत ने इस आयत की तर्जुमे में फ़रमाया "और अर्श पर استوا" फ़रमाया (जैसा उसकी शान के लाइक)

मगर कुछ देवबंदी आलिमो ने अल्लाह की ज़ात के लिए यह तर्जुमा भी कर दिया और वह मुतशाबिआहात से धोका खा गए, या फिर उनको तफ़्सीर का इल्म नहीं था, इसका तर्जुमा किया

"अल्लाह आसमान पर जा बैठा,"

"अल्लाह आसमान पर चढ़ गया"

"अल्लाह आसमान पर बैठ गया"

यह मायने अल्लाह की शान के लाइक नहीं, अव्वल तो बैठना, चढ़ना जिस्म के साथ खास होता है, अगर अल्लाह आसमान पर बैठ गया तो इसका मतलब होता की आसमान अल्लाह से बड़ा है, अगर आसमान बड़ा नहीं तो सुवाल यह है की जब आसमान बड़ा नहीं तो अल्लाह कैसे बैठ गया, और जिस

जाहिल ने इसका तर्जुमा ये किया की अल्लाह आसमान पर चढ़ गया तो इससे यह बात लाज़िम आ रही है की अल्लाह एक जगह से दूसरी जगह चढ़ गया, तो फिर पहली जगह अल्लाह से खाली ? जबकि मुसलमान का अक़ीदह है की अल्लाह की रहमत हर जगह है,

जहाँ मायने में अल्लाह की शान के खिलाफ मअना बनता हो तो वहाँ तावील फ़र्ज़ है, 'استوا' में यही सलामती है की यह हक़ है, कैसा हक़ अल्लाह जाने

**खुलासा ए कलाम :-** यह है की हमें ज़रूरी है की استوا पर ईमान लाएं, और उसकी तहक़ीक़ ना करें, ना इसका लफ़्ज़ी माना मुराद लें, बल्कि ये जाने की 'استوا' हक़ है, अब कैसा ग़लबा पाया वो अल्लाह जाने,

**सुराह आले इमरान पारा :3 आयत: 7 में हे**

**“और दूसरी आयतें वह है जिनके मायने में इस्तिवा है, वह जिनके दिलों में टेढ़ापन है, वह (मुतशाबिहात के) पीछे पड़े हैं,”**

इस फरमान से ये मालूम हुआ की जो अलफ़ाज़ कुरआन में मुतशाबिहात हैं, उनके पीछे पड़ जाना, अक़ली और ज़ाहिरी मायने मुराद लेना, गुमराह लोगों का काम है, अल्लाह से दुआ है की अहले सुन्नत के ईमान की हिफाज़त फरमाए

والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

**सुवाल:13 (जिल्द: 2, 1042)**

**सुवाल यह है की नबी करीम (صلی الله عليه وآله وسلم) ने कभी किसी को अपने हाथ या क़दम का बोसा दिया, अपनी फानी ज़िन्दगी में इस सुवाल का जवाब किसी भी हदीस से दें, और मज़ार शरीफ की क़दम बोसी करना जाइज़ है ?**

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

अव्वल तो यह क़ायदा ही बातिल है की हर चीज़ वही जाइज़ समझी जाये जो हुज़ूर ने की, और हर वो चीज़ नाजाइज़ जो हुज़ूर ने नहीं की, ये एतराज़, जाहिलाना, फासिकना, बेवकूफाना और ग़ैर ज़िम्मेदाराना है, और ऐसा मनघड़त क़ायदा बनाने वाला शागिर्दी इब्लीस है, यानि अहले खबीस ही का काम है, असल यह है की "हर वह चीज़ जिसे शरीअत ने मना ना किया वो जाइज़ है" (चाहे नबी ने किया हो या नहीं सहाबा ने किया हो या नहीं) और जिस चीज़ के करने का हुक्म अल्लाह, रसूल ने नहीं दिया वो भी, जाइज़ होता है , फिर अगर आप देखो की क़दम बोसी नबी की सहाबा ने नहीं की तो शरीअत ने इसे मना भी नहीं किया, वरना सहाबा ने ना बुखारी पढ़ी ना मुस्लिम फिर इन किताबो की दलील क्यों पकड़ी जाती है, मगर सही फ़रमाया आलाहज़रत ने- "पड़ी है अंधे को आदत की शोरबे ही से खाये,"

मिशकात शरीफ में है

हज़रते ज़ारा (رضي الله عنه) फरमाते हैं, की जब हम मदीना में आये तो जल्द ही अपनी सवारियों से उतर पड़े, हमने हुज़ूर के हाथ या पाऊं का बोसा लिया,

इसकी शरह अशातुल लमआत में शैख अब्दुल हक़ मुहद्दिस देहलवी फरमाते है- "इस हदीस से पाऊं चूमने का जाइज़ होना साबित हुआ"

आलाहज़रत फ़तावा रज़विया जिल्द: 23 सफ़ह: 745 पर फरमाते हैं,,

"क़दम बोसी ...पीर, व आलिमे दीन, सादात (अहले बैत) व सुल्ताने आदिल, और वालिदेन की जाइज़ है"

क़ब्र को बोसा

मौजूदा दौर में मेरी नाक़िस तहक़ीक़ के मुताबिक़ इसकी दो सुरते हो सकती हैं, ऐसे मज़ार पर चादर चूमना जहाँ देवबंदी, वहाबी मौजूद हों, और वो लोगों को इस फेल पर सजदा बता कर गुमराह करे, तो ऐसे मज़ार पर इस फेल से ज़रूर ज़रूर बाज़ रहना चाहिए, ताकि गैर फ़िरके वालो को कहने का मौका ना दिया जाये, और हदीस भी इसी पर शाहिद है की, (मफ़हूम) "ऐसे काम से बचो जिसमे उंगली उठाई जाये," और ऐसा मज़ार जहाँ देवबंदी वहाबी ना हो तो चादर चूमना बरकत के लिए जाइज़ है, जैसे बरेली में इमाम अहले सुन्नत की मज़ार, बाज़ उलामा इसकी (मज़ार की कदमबोसी) की इजाज़त देते हैं, और जमहूर उलामा मकरूह जानते हैं- फिर इससे बचना ही चाहिए, जैसा की अशातुल लमआत शरह मिशकात जिल्द:1 सफह:716 पर शैख़ अब्दुल हक़ फरमाते हैं- مسح نه کند قبر را بدست وبوسه نه دبدآن را (क्रब्र को हाथ ना लगाए ना बोसा दे)

मदारीजुन नबूवत जिल्द: 2 सफह: 424 पर हैं,

دریوسه دادن قبر والدین روایت بیہقی می کنند و صحیح آنست کہ لا یجوز است (والیدین کی क्रब्र को बोसा देने के बारे में एक रिवायत बहीक़ी ज़िक्र करते हैं, मगर सही यह है की नाजाइज़ है)

फ़तावा रज़विया जिल्द: 9 सफह: 523 पर हैं,

“मज़ार को ना हाथ लगाए ना बोसा दे,”

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب

सुवाल:14 (जिल्द: 3, 1938)

इस मेसेज मे कितनी सच्चाई हे मुझे रास्ता बताऐ और गुमराही से बचाये

हजरत, रसूलल्लाह सल० अलैहि० ने फ़रमाया "जिस ने तावीज़ लटकाया उसने शिर्क किया" (मसनद-ए-अहमद ,ह:154/4,हाकिम ,ह:219/4,सिलसिला सहीह,ह:492) मुहम्मदुर रसूलल्लाह सल० अलैहि० ने फ़रमाया "जिसने तावीज़ लटकाया अल्लाह उसकी मुराद पूरी ना करे" (मसनद-ए-अहमद ,ह:4/15,हाकिम ,ह:4/21)

जवाब : بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

तावीज़ दुआ दम जाइज़ मक़सद के लिए जाइज़ और सवाब है, हदीस में है की जो अपने मुसलमान भाई को जिस तरह फायदा पहुंचा सकता हो पहुंचाये, और तावीज़ जो दुश्मनी या दुसरे ग़लत मक़ासिद के लिए करते हैं हराम है और कभी कुफ़्र भी होते हैं, ऐसा करने वाला सख़्त गुनहगार है, अब रहा वह जो हदीस सुवाल में दर्ज है, उसका मतलब है की कुफ़्रिया, शिर्किया तावीज़ मना है क्यूंकि पहले दौर जहालत में लोग अपने बुतों के नाम के तावीज़ पहनकर शिफा की उम्मीद रखते थे, तो ये हुक्म उस तरह के तावीज़ के लिए है, नाकि कुरआनी आयात को कहा गया, क्यूंकि कुरआनी आयतों वाले तावीज़ में शिफा है, सूरह फातिहा शिफा है, कुरआन शिफा है लिहाज़ा ऐसे तावीज़ जो कुरआनी आयात से हो जाइज़ बल्कि हदीस से साबित हैं,

मुसनद अहमद जिल्द: 2 सफह: 400, हदीस: 4708 पर हैं

“हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर अपने बालिग बच्चों को सोते वक़्त, यह कलिमा पढ़ने को कहते” -

"بِسْمِ اللَّهِ أَعُوذُ بِكَلِمَاتِ اللَّهِ التَّامَّةِ مِنْ عَذَابِهِ وَعِقَابِهِ وَشَرِّ عِبَادِهِ وَمِنْ بَمَزَاتِ الشَّيَاطِينِ وَأَنْ يَخْضُرُونَ",

और उनमे से जो नाबालिग होते याद ना कर सकते, तो आप लिख कर तावीज़ बच्चों के गले में डाल देते

बहारे शरीअत जिल्द:3 सफह: 652 पर हैं

“गले में तावीज़ लटकाना जाइज़ है जबकि वह तावीज़ जाइज़ हो, यानी आयते कुरआनी या इस्मे इलाही, दुआओ से तावीज़ किया गया हो और बाज़ हदीसों में जो मुमानिअत आई है, उससे मुराद वह तावीज़ है, जो नाजाइज़ अलफ़ाज़ पर मुश्तमिल हो, जो ज़माना ए जाहिलियत में किये जाते थे”

फतावा अफ्रीका सफह: 168 पर हैं

"जाइज़ तावीज़ (जो) कुरआने करीम या अस्मा ए इलाहिया या दुआओ से हो उसमें असलन हर्ज़ नहीं, बल्कि मुस्तहब है, हदीस में फ़रमाया -तुम में से कोई शख्स अपने मुसलमान भाई को नफा पंहुचा सके तो पहुचाये"

मुफ़स्सिरे शहीर हकीमुल उम्मत हज़रते अल्लामा मौलाना, मुफ़्ती अहमद यार खान नईमी - मिरातुल मनाजीह शरह मिशकातुल मसाबीह जिल्द: 3 सफह: 252 पर लिखते हैं

“ये दोनों सुरते (फलक, नास) सिर्फ जादू के लिए ही नहीं बल्कि दूसरी आफतों में भी काम आती हैं, अगर इनका तावीज़ लिख कर साथ रखा जाये, तो भी अमन मिलता है, कुरआनी आयात से तावीज़ जाइज़ है ”

फ़तावा रज़विया जिल्द: 24 सफह: 208 पर हैं,

"तावीज़ बेशक अहादीस और अइम्मा ए कदीम और हदीस से साबित है"

फ़तावा रज़विया जिल्द: 24 सफह: 197 पर हैं,

"अमलियात व तावीज़ अस्मा ए इलाही व कलामे इलाही से ज़रूर जाइज़ है, जबकि उनमें कोई तरीक़ा ख़िलाफ़े शरा ना हो"

हदीस में हुज़ूर से अर्ज़ की - जो (दम, दुआ) हम करते हैं, जो दुआए परहेज़ हमारे इस्तिमाल में है, क्या ये अल्लाह की तक्रदीर पलट देते हैं, फ़रमाया - "ये खुद अल्लाह की तक्रदीर से हैं"

शरह (खुलासा)- तावीज़, गंडे , दम, दुरूद, झाड़फूंक, अगर कुरआनी आयात या हदीस की दुआओं, या बुजुर्गों के अमाल से हो, तो जाइज़ वरना मना, यानि इनका तावीज़ जाइज़ है, और तक्रदीर में यह लिखा जा चुका है, की फुला बीमारी फुला दवा या तावीज़ से जाएगी, या फला मुसीबत इस झाड़ फूंक या इस परहेज़ से दफा होंगी, मिस्ले दवा के इलाज है, और जाइज़ है, की सुन्नते सहाबा और सुन्नते रसूल है

सूफ़िया फरमाते हैं - वज़ीफ़ा, अमलियात, तावीज़ों के फायदे हासिल करने के लिए नमाज़ की पाबन्दी ज़रूरी है

जैसे औरते अपने शोहर को अपने काबू में करने के लिए, तावीज़ करवाती हैं, ऐसे तावीज़ करना भी शरीअत के खिलाफ है, कुरआन ने मर्द को हाकिम बनाया है, औरत को नहीं, इसी तरह दो मुसलमानों के बीच दुश्मनी करवाने के लिए, या बीवी शोहर में फसाद करवाने के लिए, तो दोनों गुनहगार हैं, करने वाला भी और करवाने वाला भी, हदीस शरीफ में हुज़ूर ने फ़रमाया:-

ليس منّا من خب امرأة على زوجها

(जो किसी औरत को शोहर से बिगाड़े वो हम में से नहीं)

والله اعلم ورسوله اعلم ، عزوجل صلى الله تعالى عليه وسلم

सुवाल:15 (जिल्द: 2, 1128)

हज़रत क्या क़ब्रिस्तान में अगर कोई शख्स सलाम करे तो मुर्दे उसका सलाम

**सुनते हैं, और जवाब देते हैं, कुरआन हदीस की रौशनी में वज़ाहत फरमाएं?**

जवाब : **بسم الله الرحمن الرحيم**

(खुल्बा) तमाम इबादात और तारीफ उसी समी ओ बसीर अज़मत, वाले इज़्ज़त वाले, इल्म वाले, हिल्म वाले, अल्लाह के लिए, जिसकी दी हुई ताक़त से सुनती है चींटिया भीं, हज़रत सुलैमान के लश्कर की आवाज़, और दुरूदो सलाम हो ग़मज़दा की सुनने वाले, आक्रा ओ मौला पर, जिसके लिए इमाम ने कहा, "दूरो नज़दीक के सुनने वाले वो कान" और उनकी आल ओ असहाब और तमाम मुसलमान पर, या इस तरह अर्ज़ करूँ की, "एक मेरा ही रहमत में दावा नहीं, शाह की सारी उम्मत पे लाखो सलाम"

अपने रब से उम्मीद करता हूँ की साइल मुझ पर इतना तो यक़ीन करता ही होगा, की अगर में इस सुवाल के जवाब में ये अर्ज़ कर दूँ, की, "जी हाँ, मुर्दे सुनते हैं, और जवाब भी देते हैं," तो साइल को बस होगा, मगर अक्सर देखा जाता है की हमारी सुन्नी अवाम के ज़हन में, ये सुवाल खुद नहीं आते बल्कि, इब्लीस के सगे रिश्तेदारों (देवबंदी, वहाबी) के ज़रिये, उनके दिलों में डाले जाते हैं, ताकि गुमराह करे जन्नती मुसलमानो को, इसलिए इस सुवाल का जवाब तफ़्सील से अर्ज़ किया जा रहा है, ताकि आइंदा कोई भी वहाबी दिले मोमिन में वस्वसा डाले, तो ये तहरीर उसके ईमान की हिफाज़त में मददगार हो, क्योंकि "ये रज़ा के नेज़े की मार है"

**मुर्दों के सुनने पर दलाईले काहिरा**

मुर्दों को ज़िंदा और ज़िन्दों को मारने और मुर्दों को मार कर फिर से ज़िंदा करने वाला रब फरमाता है अपने पाकीज़ा कुरआन **सूरह फ़ातिर आयत: 22** में, **ان الله يسمع من يشاء** (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)



वैसे तो बात इस वार पर खतम हो गई की, जब अल्लाह हर मुमकिन पर क़ादिर है और वह कहता है की मैं सुनाता हूँ जिसे चाहूँ तो अब ग़ैर की बातों पर नज़र की ज़रूरत ही किया, वो अल्लाह सुनाता है मुर्दा खुद नहीं सुनता, तो अब कौन है जो अल्लाह की कुदरत और ताक़त पर बंदिश लगाए, और कहे की अल्लाह इस पर क़ादिर नहीं, वरना बस इसी एक आयत के रद्द में दलील ले आओ, जिससे ये साबित हो जाये की अल्लाह भी नहीं सुना सकता मुर्दों को, मगर फ़ज़ले खुदा से ये अहले सुन्नत का खासा है, की गुमराह को उसके असली घर (जहन्नम) तक ही पंहुचा कर चेन लेते हैं, अब इस पर एक एतराज़ यह किया जाता है की मुर्दा कैसे सुनता है वह तो मर गया, अहले सुन्नत का ये अक़ीदा हरगिज़ नहीं, की कोई अपनी ताक़त से सुनता है, या देखता है, बल्कि हमारा नजरिया तो सूरज की तरह चमकदार है, जो भी सुनता है अल्लाह ही की दी हुई ताक़त से सुनता है, अब ये अल्लाह जाने की किसी को दूर से सुना दे या करीब से, हमें किया गरज़ की अल्लाह की कुदरत या ताक़त पर एतराज़ करे, और कोई ये ईमान रखे की, नबी वली या मज़ार वाला, या कोई भी मुर्दा अपनी ताक़त से (बिना रब के दिए) सुनता है, तो वह सुन्नी ही नहीं बल्कि काफ़िर है, मगर अहले सुन्नत के मोकूफ को ग़लत तरीके से अवाम में पेश किया जाता है, हम ये नहीं कहते की कोई खुद सुनता है, बल्कि फिर यही कुरआन की दलील की

ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

सहीह बुखारी और मुस्लिम में अबू सईद खुदरी से मरवी है फ़रमाया दूरो नज़दीक के सुनने वाले आक्रा ने -

إذا وصف الجنائز وأحتملها الرجال على أعناقهم، فإن كانت صالحة قالت قد موني وإن كانت غير صالحة قالت لاهلها يا ويلها إن تذهبوا بها بسمع صوتها كل شيء إلا الإنسان ولو سمع الإنسان لصعق (जब जनाज़ा रखा जाता है और मर्द उसे अपनी गर्दनोँ पर उठाते हैं, अगर नेक होता है कहता है मुझे आगे बढ़ाओ, और अगर बद होता है कहता है खराबी उसकी कहाँ लिए जाते हो, हर शय उसकी आवाज़ सुनती है, मगर आदमी) मुसनद अहमद और तबरानी ने इस हदीस को नक़ल किया,  
 ان الميت يعرف من يغسله ويحمله ومن يكفنه ومن يدليه في حفرة  
 (बेशक मुर्दा पहचानता है उसको जो गुस्ल दे, और उठाये, और जो कफ़न पहनाये और जो क़ब्र में उतारे)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضي الله عنه) ने शरह सुदूर में इसे फ़ारूके आज़म से रिवायत किया

مامن ميت يوضع عيل سريره فيخطى به ثلج خطوات الا تكلم بكلام يسمع من شاء الله الا الثقلين  
 الجن والانس

जब मुर्दे को जनाज़े पर रख कर तीन क़दम ले चलते हैं, (मुर्दा) कलाम करता है, जिसे सब सुनते हैं, जिन्हे खुदा चाहे, सिवाए इंसानों के और ज़िन्नो के)

देखो सुन्नी मुसलमानो तुम्हारा रब कैसी कुदरत वाला रब है, असल यह है की सुनने का काम कानो का होता है, मगर इस हदीस में कहा गया की, कान वाले (इंसान, ज़िन्नात) नहीं सुनते, वाह! मतलब कान सिर्फ़ जरिया है सुनाता अल्लाह है, देखो उसकी ताक़त की बेजान को सुना रहा है, और जानदार कान वाले नहीं सुन रहे, हदीस में कहा सब सुनते हैं, सिवाए इंसान और ज़िन्नात के, तो जनाज़ा जिस दिवार के पास से गुज़रा तो दीवार सुने, जिस दरख़्त के पास से गुज़रा वो दरख़्त सुने, जबकि इनके कान नहीं, तो जब अल्लाह बेकान वालों बेजान वालों को सुना सकता है, तो क़ब्रिस्तान के मुर्दों को सुनाना क्या

उसकी ताक़त से बाहर है, फिर वही आयत की -

ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

सहाबी रसूल हज़रत सलमान फ़ारसी का अक़ीदा देखो,

قال لقي سلمان الفارسي عبد الله بن سلام فقال له ان مت قبلي فاخبرني بما تلقى، وان مت  
قبلك اخبرتك

(सलमान फ़ारसी ने अब्दुल्लाह बिन सलमान से फ़रमाया अगर तुम मुझसे पहले मरो, तो मुझे खबर देना की वहां क्या पेश आया, अगर मैं तुमसे पहले मरूंगा, तो मैं तुम्हे खबर दूंगा)

सुब्हान अल्लाह यह है अक़ीदा सहाबी जिसे देख ले वहाबी, की मरने के बाद खबर भी दी जा रही है, और कहा भी जा रहा है की मैं भी तुम्हे खबर दूंगा, यानि सहाबी भी जानते है की मरने के बाद सुनने, देखने, समझने की ताक़त ख़तम नहीं होती, और अगर हो भी जाये तो अल्लाह तो है ना ताक़त वाला, जब बेजान बेकान वालों को सुना सकता है, तो मुर्दों को क्यों नहीं? अल्लाह कहता है - ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)

इमाम अहमद (رضي الله عنه) फरमाते हैं, -

ان الميت اذا وضع عى سريريه فانه ينادى يا احلاه ويا حيراناه ويا حمله سريره لا تغرنكم الدنيا كما غرتني  
(बेशक मुर्दा जब चारपाई पर रखा जाता है, पुकारता है ए घर वालो, ए हम सायो ए जनाज़ा उठाने वालों देखो दुन्या तुम्हे धोका ना दे जैसे मुझे दिया)

कहने को तो मुर्दे हैं, पर फिर भी बोल रहे हैं, किया ही कुदरत है अल्लाह की, तो जब मुर्दा बोलता नहीं मगर बोल रहा है, तो मुर्दा जो सुनता है और क़ब्रिस्तान का भी सुन रहा है, और तुम्हारे सलाम का जवाब भी दे रहा है, तो फिर मज़ार वालो का तो कहना ही क्या

अब मक़सद की बात और दलील पेश कर दूँ, की क़ब्र वाला जवाब देता है या नहीं इसे **शरह सुदूर** ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत किया.

ما من احد ير بقبرا خيه المؤمن كان يعرفه في الدنيا فيسلم عليه الا عرفه ورد عليه السلام  
(जो शख्स अपने मुसलमान भाई की क़ब्र पर गुज़रता है, और उसे सलाम करता है, अगर वह उसे दुनिया में पहचानता था, तो अब भी पहचानता और जवाब देता है)

इमाम जलालुद्दीन सुयूती (رضي الله عنه) फरमाते हैं,  
मुर्दे ऐसा जवाब नहीं देते जिसे ज़िंदा सुन लें वरना वो ऐसा जवाब तो देते हैं,  
जो हमारे सुनने में नहीं आते

**तबरानी** ने अब्दुल्लाह बिन उमर फ़ारूक़ आज़म से रिवायत किया -हुज़ूर क़ब्र पर रुके और फ़रमाया -والذي نفسى بيده لايسلم عليهم احد الا ردوا الى يوم القيمة -  
(क़सम उसकी जिसके हाथ में मेरी जान है, क्रियामत तक जो उन पर सलाम करेगा जवाब देंगे,)

अब एक हदीस बुखारी की भी ताकि कुछ लोगो का बुखार उतर जाये.  
**बुखारी, मुस्लिम, अबू दावूद**, में हज़रत अनस बिन मालिक से रिवायत-  
واللفظ لمسلم ان الميت اذا وضع في قبره انه يسمع خفق نعالهم اذا انصرفوا  
(मुर्दा जब क़ब्र में रखा जाता है, और लोग दफ़न करके पलटते हैं, बेशक वह उनके जूते की आवाज़ सुनता है)

तो अब एतराज़ करने वाला ज़रा बताये, आवाज़ जूते की तेज़ होती है या सलाम की, अगर जूते की आहट मुर्दा सुन सकता है, नहीं नहीं, अल्लाह सूना सकता है, तो फिर हमारे सलाम को क़ब्र वाले, मज़ार वाले, मदीने वाले, को अल्लाह क्यों नहीं सुना सकता, क्या तुम्हारा इस आयत पर ईमान नहीं,

ان الله يسمع من يشاء (बेशक अल्लाह सुनाता है जिसे चाहे)...

और वह तो मुर्दा है, वरना कुरआन हदीस से तो ये बात भी साबित है की, चींटीओं ने हज़रत सुलैमान के लश्कर की आवाज़ काफी दूर से सुन ली थी, तो बस साबित हुआ की मुर्दे का सुन्ना, देखना, पहचानना, बोलना, और जाने किया किया,, और मुफ्ती आजम हिन्द कहते हैं,-

वो कहते ना कहते कुछ, वो करते ना करते कुछ,

ए काश वो सुन लेते मुझ से मेरा अफसाना

और इमामे अहले सुन्नत फरमाते हैं (ए वहाबीओ तुम नबी पर सलाम नहीं पढ़ते, जबकि उन पर पत्थर सलाम करते हैं) और हमारा अक़ीदा तो ये है,

उन पर दुरूद जिन को हज़र तक करें सलाम

उन पर सलाम जिन को तहय्यत शजर की है

(अल्लाह से दुआ है की इसे तहरीर करने वाले, पढ़ने वाले, और आगे बढ़ाने वालो की बेहिसाब मग़फ़िरत करे, और शैतानी वसवसों से ईमान वालो की हिफाज़त करे, और हमें भी सुनाये मदीने की हाज़री का बुलावा, बेशक तू सब सुनाने पर क़ादिर है)

والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه ماب

सुवाल:16 (जिल्द: 3, 1610)

उर्स के माने क्या हैं, उर्स का सबूत कुरआन हदीस से इनायत फरमाएं, हो सके तो जवाब तफ्सील से दें, मेहरबानी होगी, रियाज़ बरकाती, नेपाल

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

उर्स के लुग़वी माना है शादी, इसिलए अरबी में दुलाह दुल्हन को उरुस कहा जाता है, और इस्तिला मशाइख में, औलिया, उलमा, बुज़ुर्गों के वफ़ात के दिन

को उर्स कहा जाता है, इसलिए की ये दिन मेहबूब के मिलने का दिन है, हदीसे पाक में भी विसाल पर उरुस से तवील की गई, मिश्कात में है-  
 “नक्रिरेन के सुवाल में जब बंदा कामयाब हो जाता है, तो कहते हैं,- दुल्हन की तरह सो जा जिसको उसके सिवाए प्यारे के, कोई बेदार ना करे,”

और उर्स नाम है इसाले सवाब का, जिसका जिक्र हदीस में मौजूद है, और कुरआन में उर्स का सुबूत सूरह कहफ़ में है -(आयत 9 से 26 तक ) जिसकी तफ़्सीर पढ़ना मुफीद है - तफ़्सीरे खाज़िन जिल्द:3 सफ़ह:200 में है

बादशाह ने ग़ार (गुफ़ा) के मुहं पर एक मस्जिद बनवा दी, और सालाना एक दिन मुक़र्रर कर दिया, की तमाम शहर, वाले इस दिन ईद की तरह ज़्यारत के लिए आया करें

यह मस्जिद अस्थाबे कहफ़ के पास थी, जिससे मालूम चला की मज़ार के पास मस्जिद का होना, आज का नया तरीक़ा नहीं, ना ही साल में दिन मुक़र्रर करके मज़ार पर ज़्यारत को जाना कोई आज का तरीक़ा, मज़ीद तफ़्सील के लिए जा-अलहक का मुताला करें)..

सुवाल:17 (जिल्द: 3, 1959)

सुवाल में मैं यह लिखना भूल गया, था, की वहाबी यह भी कहता है की, हम कुरआन के मायने खुद पढ़ सकते हैं, उसे समझ सकते हैं, खुदा ने दिमाग दिया है तो क्यों, उलामा से पूछने की उनके पास जाने की ज़रूरत क्या है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

जब इब्लीस के घराने का कोई शख्स (वहाबी) यह बात करता है, की हम कुरआन हदीस खुद समझ सकते है, हमें आलिम, इमाम की क्या ज़रूरत, तो मुझे यक़ीन है की खुद वहाबीओ के वालिद (इब्लीस) भी अपने बेटों की इन

हरकत पर सख्त नाराज़ होता होगा, और बोलता होगा, की “ए कमबख्तो वहाबीओ तुम तो ऐसी बड़ी बड़ी बातें बोल जाते हो जो मैं भी कभी नहीं बोलता, तुम मुझ से भी एक क़दम आगे बढ़ रहे हो, मेरी औलाद हो औलाद रहो, मेरा बाप ना बनो”

खैर यह इन लोगो के घर की आपसी बात है हमें किसी के घर में मामले में नहीं बोलना चाहिए, अब रहा इसका जवाब की कुरआन हदीस खुद समझना चाहिए या किसी जानने वाले से पूछ कर अमल करना चाहिए, तो अल्लाह ने इसका जवाब खुद कुरआन में दे दिया, अल्लाह कुरआने पाक में फरमाता है -

(सूरह नहल 16 आयत 43)- **فَسْأَلُوا أَبْلَ الذِّكْرِ إِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ**

“तो ए लोगो इल्म वालों से पूछो, अगर तुम्हें इल्म नहीं”

तफ़सीर सिरातुल जिनान फि तफ़सीर-उल-कुरआन जिल्द:5 सफ़ह:320 पर है “यह भी मालूम हुआ की जिस मसअले में इल्म ना हो उसके बारे में उलामा की तरफ रुजू करना ज़रूरी है”

हदीस अबू दावूद में है- “जहालत की बीमारी की शिफा दरयाफ्त करने में है”

तफ़सीर दर्रे मंसूर में एक हदीस नक़ल है की हुज़ूर ने फ़रमाया:-

आलिम के लिए मुनासिब नहीं की वो अपने इल्म पर खामोश रहे, जाहिल के लिए मुनासिब नहीं की वो अपनी जहालत पर खामोश रहे

(यानि जिसे इल्म ना हो वो आलिम से पूछे) यानि खुद कुरआन ले कर समझने ना बैठ जाये, वरना इसी कुरआन से हिदायत भी पाते हैं और गुमराह भी होते हैं, अल्लाह फरमाता है **सूरह बकरा आयत:6** में -

“अल्लाह बहुत को गुमराह करता है और बहुत को हिदायत फरमाता है”

और फिर कितनी हदीस इस पर गवाह है की "जो इल्म सीखने के लिए घर से निकला अल्लाह की राह में है" इन हदीसों से तो यही साबित होता है की घर से जब निकला जायेगा जब किसी साहिबे इल्म के पास जाया जायेगा और फिर इल्म का सीखना सुन्नत है एक हदीस में है , सहाबा तो हुजूर के पास आते, इसी तरह सहाबा के पास तांबई आते, इसी तरह आज तक ये सिलसिला चालू है, मगर सुवाल में जिस खबीस का जिक्र किया गया है उसे ये तो सोचना चाहिए की अगर किसी आलिम के पास इमाम के पास जा कर पढ़ने की ज़रूरत नहीं, तो फिर वहाबीओ ने मदरसे क्यों कायम कर लिए, क्या वहाबी अपने मदरसे में छोले भठूरे बनाना सिखाते हैं, या कुरआन हदीस सिखाते हैं, ? अगर हाँ तो (अजीब जहालत है) किसी ने सही कहा है वहाबी बोलता है सोचता नहीं, अगर किसी आलिम से सीखना ज़रूरी नहीं तो इस हदीस का क्या मतलब हुजूर ने फ़रमाया "इल्म मोमिन का खोया खज़ाना है जहाँ से मिले लेलो"

والله تعالى أعلم بالصواب

**सुवाल:18 (जिल्द: 4, 2085)**

**हिला शरई क्या होता है, ये कहा से साबित है**

**जवाब :** بسم الله الرحمن الرحيم

खुद को गुनाह से बचाते हुए. ऐसा रास्ता इख्तियार करना की काम भी हल हो जाये और शरीअत में कोई गुनाह भी ना हो, हीला कहलाता है जाइज़ काम का हीला जाइज़ है और धोके के लिए बुरा इसका सुबूत कुरआन हदीस वगैरा सब से साबित है, कुरआन में **सूरह: 38 आयत :44** में है-

وَحُذِّبِيكَ ضَعْفًا فَاصْرَبِي ۖ وَلَا تَحْثُثِي



(और फ़रमाया अपने हाथ में झाड़ू ले कर उससे मार दे)

तफ़सीर सिरातुल जिनान फि तफ़सीर उल कुरआन जिल्द:8 सफ़ह:408 में है  
 "हज़रत अय्यूब (عليه السلام) ने क्रसम खाई की मैं तंदरुस्त हो कर (एक खता पर) अपनी बीवी को 100 कोड़े मरुंगा, जब सेहतयाब हुए तो अल्लाह ने हुक्म दिया, आप उन्हें झाड़ू मार दें, अपनी क्रसम ना तोड़े आपने 100 टीलियो वाली एक झाड़ू ले कर, अपनी बीवी को एक ही बार मार दिया"  
 फुकुहा किराम आयत से भी शरई हीले पर इस्तदलाल फरमाते हैं,

फतावा आलमगीरी जिल्द:6 सफ़ह:390 पर है

"जो हीला किसी का हक़ मारने, या उसमे शुबह पैदा करने, या बातिल से फरेब देने के लिए, किया जाये, मकरूह है, और जो हीला इसलिए किया जाये की आदमी हराम से बचे, या हलाल को हासिल करे वह अच्छा है"

जाइज़ हीले की एक मिसाल -अगर किसी के वालिद का इन्तिक़ाल हो गया, और उसके ज़िम्मे पर बहुत सी नमाज़ बाक़ी है, और उनके अपनों में यह चाहता है की उनकी नमाज़ो का सदक़ा दे, तो एक नमाज़ का सदक़ा एक फ़ित्रे की मिसाल होगा, इसी तरह 6 नमाज़ (5 फ़र्ज़ 1 वित्र) का पैसा एक दिन का जोड़ना होगा -

माना एक फितरा = Rs. 40 है

6 नमाज़ की रक़म होगी,  $40 \times 6 = \text{Rs. } 240$

यानी मरहूम की एक दिन की नमाज़ का सदक़ा Rs. 240 देना होगा, इसी तरह एक साल की नमाज़ो का हुआ  $240 \times 365 = \text{Rs. } 87,600/-$

अब अगर 10 साल की नमाज़ क़ज़ा थीं या 20 साल की इसी तरह जोड़ लें,

(दस साल की मिसाल के तोर पर)  $87600 \times 10 = \text{Rs.} 8,76,000/-$

यानी अगर किसी के वालिद की दस साल की नमाज़ क़ज़ा है, और उसकी रक़म हुई 8 लाख से ज़्यादा, मगर देने वाले के पास इतनी रक़म नहीं है, तो शरई हीला कर सकता है इसका तरीक़ा यह है की, जितनी रक़म देने पर क़ादिर है, उतने पैसे अलग कर लें, मसलन 10 हज़ार दे सकता है, तो वालिद की नमाज़ की तरफ से 10 हज़ार किसी शरई फ़क़ीर को दे दे, यानि हाथ पे रख दे, यानि मालिक कर दे, (जबकि फ़क़ीर को हीले के बारे में समझा दिया गया हो) इस तरह वालिद के 8 लाख से 10 हज़ार कम हो गए, अब वो फ़क़ीर उस रक़म (10 हज़ार) को अपनी खुशी से वापस उसे ही दे दे, अब इस देने वाले पर फिर से 10 हज़ार वापस आ गए, ये लेने वाला मरहूम की तरफ से फिर से वही 10 हज़ार इसी फ़क़ीर के क़ब्ज़े में दे दे इस तरह मरहूम की तरफ से 10 और यानि 20 हज़ार अदा हो गए, इसी तरह कई बार ये लेन-देन कर के उन्ही 10 हज़ार की रक़म से मरहूम की तरफ से लाखों का फितरा दिया जा सकता है, और आखिर में ये रक़म उसी फ़क़ीर को दे, दे इसी को शरई हीला कहा जाता है

**मकरूह हीले की एक मिसाल -** यानि अगर शोहर बीवी दोनों साहिबे निसाब है (मसलन कुरबानी अगर 25 हज़ार वाले पर फ़र्ज़ है) और ये दोनों 30 - 30 हज़ार के मालिक हैं, तो इस तरह दोनों को कुरबानी वाजिब हुई, अब अगर शोहर सोचे की एक कुरबानी की जाये 2 ना की जाये, और शोहर ने (कुरबानी से पहले ही) अपनी रक़म से 10 का मालिक अपनी बीवी को कर दिया, इस तरह शोहर के पास 20 हज़ार बचे और बीवी के पास 40 हो गए, यानि कुरबानी अब भी बीवी पर होगी, शोहर पर नहीं, मगर कुरबानी से

बचने के लिए खास कुरबानी के दिनों में ऐसा करना मकरूह है, हाँ अगर कुरबानी और ज़कात के दिनों से पहले ही शोहर खुद मालदार रहना नहीं चाहता, और अपनी खुशी से अपने माल का मालिक किसी को कर दे, तो मकरूह भी नहीं, यानि कोई हर्ज़ नहीं,  
 وَهُوَ تَعَالَىٰ أَعْلَمُ بِالصَّوَابِ

**सुवाल:19 (1524, जिल्द: 3)**

नमाज़ में रफयदैन् क्यों नहीं करनी चाहिए ? ना करने के चंद दलील पेश कीजिये मेरे दोस्त ने 40 हदीस पेश की हैं की करना चाहिए, वो मैं आपको भेज रहा हूँ, जनाब मुफ़्ती एस.एम्.एस. वारसी साहब, सुवाल यह है की क्या हमें रफयदैन् करना चाहिए या नहीं

**जवाब :** بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

हदीस से रफयदैन् का करना और ना करना दोनों ही साबित है मगर हुज़ूर ने हमेशा रफयदैन् किया हो ये साबित नहीं, पहले करते थे बाद में ज़ाहिरी हयात तक नहीं किया, इसिलए वो अमल मंसूख हो गया, और अगर मान भी लिया जाये की रफयदैन् किया जाये, तो शरीअत की रू से रफयदैन् का मसअला महज़ मुस्तहब ठहरेगा, किया तो ठीक ना किया तो ठीक, मगर रफयदैन् पर इस तरह बेहेस करना की जैसे कोई अक्रीदे का मसअला हो, ये भी वहाबी की चाल है ताकि आप असली मक़सद (अक्रीदे) पर बात ना कर सको, अब रहा यह की वहाबी कहता है की हम बुखारी को मानते हैं, हुज़ूर ने जो किया बस वही करो, फिर तो हुज़ूर ने 11 शादियां की हैं, आप क्यों नहीं कर लेते, और तो और किसी हदीस से हुज़ूर का पायजामा पहनना साबित नहीं, तो आप पायजामा क्यों पहनते हो, वो भी इतना ऊँचा अगर कोई

वहाबी कहे की हम वो करते है जो नबी ने किया तो आप उससे बस यह हदीस मांग लो हुज़ूर ने कब पायजामा पहना और सहीह हदीस ही का हवाला हो अगर बुखारी से दे तो और अच्छा, **इमाम तहवी** ने फ़रमाया-  
**"अगर वईल ने हुज़ूर को एक बार रफयदैन करते देखा तो हज़रते अब्दुल्लाह इब्ने मसूद ने हुज़ूर को 50 बार रफयदैन करते नहीं देखा"**

(इससे मालूम हुआ की अब्दुल्लाह इब्ने मसूद की हदीस क़वी है, क्यूंकि आप हुज़ूर की सोहबत में रहते थे, बड़े फ़कीह आलिम थे, और नमाज़ में हुज़ूर के क़रीब खड़े होने वाले थे)

**इब्ने आबि शेबा** -"हुज़ूर जब नमाज़ शुरू फरमाते थे, तो अपने हाथ उठाते थे, फिर नमाज़ से फारिग होने तक हाथ ना उठाते"

**तहवी शरीफ** में अब्दुल्लाह इब्ने मसूद से रिवायत,

**"आप पहली तकबीर में हाथ उठाते थे फिर कभी ना उठाते थे,"**

**तिर्मिज़ी, अबू दावूद, नसाई, हज़रते अलकमा** से रिवायत करते हैं, -

**"अब्दुल्लाह इब्ने मसूद ने फ़रमाया - क्या मैं तुम्हारे सामने हुज़ूर की नमाज़ ना पढ़ूं, और आपने नमाज़ पढ़ी, और इसमें सिवाए तकबीरे तहरीमा के कभी हाथ ना उठाये"**

इससे पता चला की हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद ने सहाबा के मजमे में नमाज़ पढ़ी, और सिवा तकबीर के हाथ ना उठे, तो किसी ने मना ना किया, सारे सहाबा की खामोशी इस बात की दलील है, की बाद में रफयदैन हुज़ूर ने नहीं किया, वरना सारे सहाबा फरमाते की इब्ने मसूद आपकी नमाज़ ग़लत है ये हुज़ूर की नमाज़ नहीं

**दलील और भी है** मगर वक़्त की तंगी है, और जवाब को इख़िताम पर ले जाते हुए, साइल से अर्ज़ करना चाहता हूँ की, रफयदैन ना करना बड़े बड़े

सहाबा का अमल था, और पहले हज़रत उमर भी रफयदैन् करते थे मगर जब आपको रफयदैन् मंसूख होने का इल्म हुआ तो आपने रफयदैन् करना बंद कर दिया, लिहाज़ा यह कहना की हज़रत उमर से रफयदैन् साबित है ये बात तो सही है मगर हमेशा का अमल रहा हो ये साबित नहीं और बड़े बड़े सहाबा और बुज़ुर्गों का यही मसलक है की रफयदैन् अब नहीं किया जायेगा, और फिर साइल हनफ़ी है जैसा की सुवाल में बयान हुआ, तो फिर हनफ़ी को वहाबी की बात मानने की ज़रूरत क्या ? क्या ग़रीब नवाज़ ने रफयदैन् किया, क्या जितने वली हनफ़ी गुज़रे उन सबने रफयदैन् किया तो जब इन्होंने आंखे बंद करके इमामे आज़म की बात को मान लिया और सारी ज़िन्दगी रफयदैन् नहीं किया, तो क्या इन्हे हदीस का इल्म नहीं था, या ये हदीस के खिलाफ नमाज़ पढ़ के वली बन गए, क्या आज के लोग इनसे ज़्यादा बुलंद रुतबा हो गए, ? अगर नहीं तो हनफ़ी मुक्तदी को चाहिए की कुरआन की इस आयत पर अमल करते हुए इमामे आज़म के मसलक पर ही अमल करे

अल्लाह फरमाता है - "ए लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हे इल्म नहीं"

और इल्म वाले इमामे आज़म ने बता दिया की रफ़ायदें अब नहीं तो बस नहीं

"एक देखने वाले का कहा मान लिया है

बिन देखे मैंने तुझको खुदा जान लिया है

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

**सुवाल:20 (647, जिल्द: 2)**

**क्रब्रो पर फूल चढ़ाना कैसा क्या सहाबा ने ऐसा किया है बराए करम दलील के साथ जवाब दे**

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

कब्रों पर फूल डालना जाइज़ है और वो काम जो सहाबा या रसूल ने नहीं किये हराम नहीं हो जाते किसी भी काम के जाइज़ होने के लिए इतना काफी है वो शरीअत में मना ना हो, फिर चाहे उसे सहाबा ने किया हो या नहीं, और देओबंदियों की यह चाल की कब्र पर क्या फूल सहाबा ने डाले हैं, बातिल है, क्योंकि फ़िक्ह हनफ़ी की वो किताबें जो यह भी पढ़ते हैं उनमें फूल डालने के जवाज़ के फतवे मौजूद हैं, वरना सहाबा ने तो शादी कार्ड भी नहीं छपवाए मगर आज जब देवबंदी शादी करता है तो वो क्यों छपवाता है और ऐसे हज़ारों काम जो इस दौर में ऐसे हैं जो सहाबा ने नहीं किये मगर वहाबी करता है जैसे हिंदी बोलते हैं, किसी सहाबा ने हिंदी नहीं बोली होगी, और जो ये कुरआन वहाबी पढ़ता है ये भी सहाबा ने नहीं पढ़ा ये किताबी प्रिंटिंग शक्ल भी उस वक़्त नहीं थी, मुसलमान के लिए इतना काफी है की जो सुन्नी उलामा ने बयान किया उसे हक़ जाने और उसी पर अमल करे, शरीअत में आलिम से बड़ कर अपनी अक़ल ना लगाए, अल्लाह फरमाता है "तो ए लोगो इल्म वालो से पूछो अगर तुम्हें इल्म नहीं" किसी भी आयत में ये नहीं फ़रमाया की "ए लोगो खुद अक़ल लगा लिया करो, और ना ये फ़रमाया की बस वही जाइज़ है जो सहाबा ने किया बाकी सब हराम" (अल्लाह, इब्लीस और उसकी औलाद से सुन्नी बरेलवियों को अमान में रखे)

आलमगीरी जिल्द: 5 सफह:351 पर है:- وضع الورد والرياحين على القبور حسن  
(कब्रों पर गुलाब और फूलों का रखना अच्छा है)

रददुल मोह्तार में है انه مادام رطباً يسبح فيؤنس الميت وتنزل بذكره الرحمة  
(फूल जब तक तर रहे तस्बीह करते रहते हैं, जिससे मय्यित को उन्स हासिल होता है और उसके ज़िक्र से रहमत नाज़िल होती है)

फतावा रज़विया जिल्द:9 सफह: 106 पर है

“फूलों की चादर बाला ए कफ़न डालने में असलन शरअन कोई हर्ज़ नहीं, बल्कि नीयते हसन से हसन है, जैसे कब्रों पर फूल डालना कि वह जब तक तर है, तस्बीह करते रहते हैं उनसे मय्यित का दिल बहलता है और रहमत उतरती है”

फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 431 पर है

“और खुद अगर कोई दलील ख़ास ना होती, तो मना पर शरा से दलील ना होना, जवाज़ के लिए दलील काफी थी,” जो (शरीअत के किसी काम को) नाजाइज़ कहे दलील देना उसके ज़िम्मे है”

وَهُوَ تَعَالَى أَعْلَمُ بِالصَّوَابِ

सुवाल:21 (1245, जिल्द: 2)

हज़रत सरकार के ज़माने में औरत और मर्द एक साथ नमाज़ पढ़ते थे अब क्यों नहीं,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم :

सरकार में वक़्त में औरतें मस्जिद जाया करती थीं, मगर बाद में फ़ितने के खौफ़ में दौरे फ़ारूक़ी में मना कर दिया गया और हज़रत आयेशा ने फ़रमाया

لَوْ أَنَّ رَسُولَ اللَّهِ صَلَّى اللَّهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ رَأَى مِنَ النِّسَاءِ مَا رَأَيْنَا لَمَنْعَهُنَّ مِنَ الْمَسْجِدِ كَمَا مَنْعَتْ بَنُو إِسْرَائِيلَ نِسَائَهُمَا ١ رواه احمد وبخارى ومسلم

(हुज़ूर हमारे ज़माने में औरतों को मुलाहज़ा फरमाते तो उन्हें मस्जिद जाने से मना करते जैसे बनी इस्राइल ने अपनी औरतों को मना कर दिया था)

फतहल क़दीर में है -

عمم المتأخرون المنع العجائز والشواب في الصلوات كلها لغلبة الفساد في سائر الاوقات

(फसाद के ग़लबे की वजह से तमाम वक्तों की नमाज़ों में उमूमन बूढी और जवान औरतों का निकलना मुतखरीन उलामा ने मना फ़रमाया है)

फतावा रज़विया जिल्द:14 सफ़ह: 551 पर है

"जब और फसाद फैला तो उलामा ने जवान व ग़ैरे जवान किसी के लिए (हाज़री ए मस्जिद की) इजाज़त न रखी"

अब इस बात से आप खुद ही अंदाज़ा लगा सकते हो की जब सहाबा के वक्त में फसाद का खौफ हुआ, और उन्होंने मस्जिद की हाज़री औरतों के लिए मना कर दी, तो आज का वक्त कैसा है यह मुझे आपको बताने की ज़रूरत नहीं, आप खुद गौर करें की आज कल मस्जिद में औरतें और लड़किया नमाज़ को जाएँगी, तो हाल किया होगा, मर्दों का जमघट मस्जिदों के बाहर होगा, इमाम से जवान लड़के ज़्यादा मेल जोल रखने लगेंगे, दिन भर मस्जिद में रहेंगे, बाकी आप खुद समझदार हो, ये दौर दौरे रसूल से बेहतर नहीं बुरे से बुरा-तर है, और हदीस में है-

"गुज़रा हुआ कल आज से बेहतर था, और आज का दिन आने वाले कल से बेहतर है, ता क्रियामत इसी तरह होगा"

अब इस हदीस से और साफ़ हो गया की पहले का गुज़रा हुआ दिन अच्छा, और आने वाला और खराब होगा, लिहाज़ा सहाबा ने जो किया अच्छा किया, और उलामा ने बाकी रखा तो और अच्छा किया,

हुज़ूर ने फ़रमाया **انه سيحدث بعدى اشياء وان من احبها الى لما احدث عمر**  
मेरे बाद बहुत सी चीज़े ईजाद होंगी उनमे से मुझे वो सबसे ज़्यादा पसंद है,  
जो उमर ईजाद करें,

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب



सुवाल:22 (1187, जिल्द: 2)

ऐसी हदीस पेश करें हवाले के साथ जिससे 20 रकअत तरावीह साबित हो

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

तरावीह 20 रकअत का होना सुन्नते मौअक्कदा है, जिसकी दलील और तफसील किताब "जा-अल-हक्क" में देखि जाये, और इसी पर हज़रत उमर व दीगर सहाबा का अमल रहा, बल्कि हज़रत उमर ने इसके लिए बाक़ायदा जमाअत का इंतिज़ाम भी किया, और हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया

انه سيحدث بعدى اشياء وان من احبها الى لما احدث عمر

“मेरे बाद बहुत से चीज़े ईजाद होंगी उनमे से मुझे वो सबसे ज़्यादा पसंद है, जो उमर ईजाद करें,”

और हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया- عليكم بسنتي وسنة الخلفاء الراشدين

(फ़रमाया तुम पर लाज़िम करता हूँ, अपनी सुन्नत को अपने खुलफाए

राशिदीन की सुन्नत को)

وهو تعالى أعلم بالصواب

सुवाल:23 (1334, जिल्द: 2)

यह बताएं की नमाज़ से पहले तकबीर जो होती है, तकबीर से पहले खड़े होना चाहिए, या बीच में खड़े होना चाहिए, मैंने सुना है की हुज़ूर तकबीर से पहले ही खड़े होते थे, और एक दो बार बीमारी की वजह से तकबीर के बीच में खड़े हुए तो कौन सा तरीका सही है, और क्या तकबीर से पहले खड़े होने से नमाज़ हो जाएगी, हो सके तो हवाले के साथ जवाब दें,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

तरीका सही यही है जो सदीओ से उलामा की मोतबर कुतुब से साबित है, की जब मुकब्बिर “**حي على الفلاح**” कहे तो इमाम और मुक्तदी दोनों को खड़ा होना चाहिए, और मुक्तदी को पहले से खड़े रहना मकरूह है, मगर नमाज़ हो जाएगी,

**फतावा आलमगीरी जिल्द:1 सफह:75 पर है**

إذا دخل الرجل عند الإقامة يكره له الانتظار قائماً ولكن يقعد ثم يقوم إذا بلغ المؤذن قوله حي على الفلاح (अगर कोई तकबीर के वक़्त आये तो बैठ जाये, क्यूंकि खड़े हो कर तकबीर सुनना मकरूह है, फिर जब मोअज़्ज़िन “**حي على الفلاح**” कहे तो खड़ा हो,

**फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 420 पर है**

तकबीर खड़े हो कर सुनना मकरूह है, यहाँ तक की उलामा ने फ़रमाया अगर तकबीर हो रही है, और मस्जिद में आये तो (फ़ौरन) बैठ जाये, और जब मुकब्बिर “**حي على الفلاح**” पर पहुंचे उस वक़्त सब खड़े हो जाएँ

**फतावा रज़विया जिल्द:5 सफह: 422 पर है**

“इमाम के लिए इसमें कोई खास हुक्म नहीं, मुक्तदी को हुक्म है की तकबीर बैठ कर सुने “**حي على الفلاح**” पर खड़े हो, खड़े खड़े तकबीर सुनना मकरूह है”  
والله تعالى اعلم وعلمه جل مجده اتم واحكم-

**सुवाल:24 (1604, जिल्द: 3)**

हज़रत नबी पाक ने एक हदीस बयान की है की मुस्लमान में 72 फ़िरक़े होंगे, और उनमे से एक हक़ पर होगा, क्या यह हदीस सही है, हवाला मिल सकता

है, कहा पर इसका ज़िक्र है, और ज़ैद कहता है की, यह बात जो कही जाती है की, हुज़ूर के सदके में सारी दुनिया बनी यह ग़लत है,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

इसे तिर्मिज़ी ने अपनी सुनन में अबु हु़रैरा से रिवायत

"यहूदी 71 या 72 फ़िरकों में बट गए ईसाई भी इसी तरह, लेकिन मेरी उम्मत 73 फ़िरकों में तक़सीम हो जाएगी,"

इसी तरह मिश्कात में भी नक़ल किया और रिवायत हज़रत उमर से और मीरात शरह मिश्कात जिल्द:1 सफ़ह:153 पर है

"यक़ीनन बनी इसराइल 72 फ़िरकों में बट गए, और मेरी उम्मत 73 फ़िरकों में बट जाएगी, सिवाय एक मिल्लत के सभी दोज़खी, लोगों ने पूछा या रसूलल्लाह वह कौन सा फ़िरका है, फ़रमाया जिस पर मैं और मेरे सहाबा हैं"

और ये कोई पहली बात नहीं की वहाबी ने इस पर एतराज़ किया हो, ये उनका काम है हमेशा से, और हमें हमारे मोतबर उलामा ने जो पहुंचाया वो क़ाबिले एतबार है- तारीखे दमिशक में है - لولاك لما خلقت الدنيا -

(अगर आप ना होते तो मैं दुनिया को ना बनाता)

अल-मवाहिब में है - (अल्लाह ने हज़रत आदम से फ़रमाया)

لولا محمد ما خلقتك ولا ارضا ولا سماء

(अगर मुहम्मद ना होते तो मैं तुम्हे बनाता ना ज़मीनो आसमान को)

अल-मवाहिब में है -

ان الله تعالى قد خلق قبل الاشياء نور نبيك من نوره - رواه عبدالرزاق صوفيه عند البيهقي

(ए जाबिर ! बेशक अल्लाह ने तमाम अश्याँ से पहले तेरे नबी का नूर अपने नूर से पैदा किया,)

और इसी को इमाम बहैकि ने भी रिवायत किया

फतावा रज़विया जिल्द:30 सफह: 667 पर है-

"तो सारा जहाँ ज्ञाते इलाही से बा-वास्ता हुज़ूर साहिबे लौलाक, (صلی اللہ تعالیٰ علیہ وسلم) पैदा हुए, यानि हुज़ूर के वास्ते हुज़ूर के सदक़े हुज़ूर के तुफ़ैल में"  
والله تعالى اعلم وعلمه جل مجده اتم واحکم-

सुवाल:25 (1835, जिल्द: 3)

क्या फातिहा दिलाना शिर्क है ?

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم :

फातिहा शिर्क नहीं एक क्रिस्म का इसाले सवाब है, यानि आप अपने किसी भी नेक आमाल का सवाब किसी दूसरे मुसलमान (जिंदा या मुर्दा) को भेज सकते हो, इसी का नाम फातिहा है, और इसी को आम जुबान में नियाज़ कह दिया जाता है, और ये हदीस से साबित है, और फिर आज अगर कोई खाना आगे रख कर, कुरआन पढ़े तो इसमें शिर्क कहाँ से आ गया, शिर्क तो जब होगा जब फ़क़त अल्लाह के लिए फातिहा दी जाती हो और कोई गैरुल्लाह के लिए दे दे, जैसे की इबादत वगैरा। लोग मस्जिद मदरसों में भी तो अपने मरहूमों के नाम से चंदा देते हैं, ये भी एक इसाले सवाब है और इसी को फातिहा कह दीजिये, क्या ये शिर्क है, और जो शिर्क कहता है वो भी ये करता होगा, फ़क़ीर को पैसे देना, ग़रीब को खाना खिलाना कितने ही ऐसे काम हैं, जो मुसलमान अपने रिश्तेदारों के नाम से करता है, सब इसाले सवाब है, और यही फातिहा

**\*हदीस शुएबुल ईमान-** जब तुम में से कोई कुछ खैरात करे, तो चाहिए उसे की, (कुछ) अपने माँ बाप की तरफ से करे, इसका सवाब उन्हें मिलेगा, और इसके सवाब में भी कोई कमी ना होगी,

**\*हदीस शुएबुल ईमान** - मुर्दे का हाल कब्र में डूबते हुए इंसान की तरह है, वो शिद्दत से इन्तिज़ार करता है की, कोई बाप या माँ या भाई या दोस्त की दुआ, उसको पहुंचे, और जब उसे दुआ पहुँचती है तो वो उसके लिए दुनिया और जो कुछ उसमे है इससे बेहतर होती है

**\* एज़न** -जब कोई शख्स मय्यित को इसाले सवाब करता है, तो जिब्राइल उसे नूरानी तबाक में रख कर क़बर के किनारे खड़े हो जाते हैं, और कहते हैं- "ए क़बर वाले यह तोहफा तेरे घर वालों ने भेजा है कुबूल कर," और यह सुन कर वो खुश होता है, और उसके पड़ोसी अपनी महरूमी पर ग़मगीन

**\*कश्फ़ अल-खफ़ा** - जो क़ब्रिस्तान में 11 बार सूरह इख़लास पढ़ कर मुर्दों को इसका सवाब पहुंचाए तो मुर्दों के सवाब के बराबर भेजने वाले को भी सवाब मिलेगा,

**\*सुनन अबु दावूद** - हज़रत साद ने अर्ज़ की, मेरी माँ का इन्तिक़ाल हो गया, कौन सा सदक़ा अफ़ज़ल है, फ़रमाया पानी, उन्होंने एक कुंवा खुदवाया और कहा ये उम्मे साद के लिए है,

والله تعالى اعلم

**सुवाल:26 (2245, जिल्द: 4)**

हज़रत क्या इसाले सवाब के लिए ज़रूरी है की अच्छा पकवान ही बना कर ग़रीबों मिस्कीनों को खिलाया जाये, तो ही उसका सवाब मुर्दों को पहुंचेगा क्या उतना पैसा जितने में बिरयानी बनवानी हो निकाल कर ना दे दिया

जाये गरीब को या किसी ज़रूरत मंद इंसान को तो क्या ये सही रहेगा, क्योंकि आज के इस दौर के हिसाब से कोई ऐसा गरीब नहीं है जो ये अच्छे पकवान ना खाया हो, क्या ये ज़रूरी है की हम ढेर सारे फ़क़ीरों को बुला कर ही खिलाये, वही रक़म किसी एक को अगर दे दिया जाये, तो क्या उससे मुर्दों को फायदा नहीं होगा, रहनुमाई फ़रमाएं

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

आपने जो सूरते हाल सवाल में ब्यान फ़रमाई बदमज़हब से मुशाबिहत रखती है वो भी फातिहा को बंद करवाने के लिए ये तरीके दिलो में डालते हैं, की आप पैसे दे दो सवाब तो जायेगा ही, और असल काम ये करते हैं की घरों से मामुलाते अहले सुन्नत के मुताबिक़ तरीक़ए फातिहा को ख़तम किया जाये, जवाब यह है की अहले सुन्नत के नज़दीक़ हर अमले सालेह का सवाब मुस्लमान को इसाल किया जा सकता है, अपने जो कहा की पकवान न पकवायें पैसे ग़रीबों को देदे, तो सूरत ये भी जाइज़ है सवाब इसमें भी होगा. मगर याद रखना चाहिए की पैसे दे देने से फ़क़त एक फ़क़ीर को देने का सवाब होगा, और अगर आप उस रक़म से घर में कुछ पकवाये तो आपकी मेहनत और वक़्त पर भी सवाब मिलेगा , और पैसा एक ही हाज़त पूरी करेगा और खाना 50 का पेट भरेगा जब आपका खाना 50 लोग खा कर दुआ करेंगे तो सवाब ज़्यादा होगा या एक पैसा देने से, कुरआन में नहीं पढ़ा की अल्लाह फ़रमाता है - “दुश््वारी के साथ आसानी है, दुश््वारी के साथ आसानी है” और हदीस कहती है “सवाब उस अमल में ज़्यादा है जिसमे मशक्क़त ज़्यादा है” अब आप ग़ौर कर लो कि फातिहा बंद करके मशक्क़त बंद करी तो सवाब बढ़ेगा या कम होगा,

दूसरी अहम् बात – आज दौर पुरफितन है अहले सुन्नत की निशानिया ख़तम किये जाने का ख़याल लोगो के दिलो में है, सोचो अगर आपने यही तरीक़ा अपनाया की हर बार पैसे फ़क़ीर को दे दिए, तो आपके बच्चे यही देखेंगे और सीखेंगे, फातिहा क्या होती है उन्हें ख़बर भी ना होगी, वो भी इसी तरीके पर अमल करेंगे, लिहाज़ा अगर आपको अपने घर में सुन्नियत ज़िंदा रखनी है तो फातिहा का तरीक़ा घर में चालू रखो, फातिहा के वक़्त बच्चो को भी हाज़िर रखो, ताकि वो देखे और सीखे की हमारे घर, और बाप दादा का क्या तरीकेकार था, और आपके मरने के बाद गुमराह होने से बच जाएँ, वरना कल को नियाज़ फातिहा उन्हें नई चीज़ लगेगी, क्यूंकि आप तो पैसे देने का रिवाज़ शुरू कर चुके होंगे,

मैं यह नहीं कहता की पैसे देना ग़लत है, मक़सद यह है की अगर अपने घर में खाना पकने का मसअला है तो आप बाज़ार से मिठाई या कुछ भी ला कर फातिहा दे दें मगर घर में ये सिलसिला चालू रखे, और कुछ पैसे भी दे देंगे तो हर्ज़ नहीं, और आपके ज़हन में जो ये बात है की ग़रीब कहा से लाऊँ तो आपको अर्ज़ कर दूँ की इसाले सवाब की फातिहा में ग़रीब को ढूँढने की ज़रूरत नहीं, हर नफिल खाना अमीर भी खा सकता है, पडोसी भी, रिश्तेदार भी, और खुद आपके घर वाले भी, लिहाज़ा आप खाना किसी को भी खिला दें, इस वस्वसे में ना आएँ, की ग़रीब नहीं मिलता, चाहे आपका खाना खाने वाला अपने घर में कैसा ही अच्छा खाना खता हो इससे भी फ़र्क़ नहीं पड़ता आपको सवाब ज़रूर मिलेगा,

والله سبحانه وتعالى أعلم بالصواب

सुवाल:27 (2269, जिल्द: 4)

हज़रत ऐसा कहा जाता है की हुज़ूर अलैहिस्सलाम जहाँ भी कोई महफ़िल होती है या कोई मुहब्बत से पुकारे तो वहा आप तशरीफ़ लाते हैं, तो क्या यह आना कुरआन हदीस से साबित है

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

मसअला यह नहीं है की जहाँ पुकारे वहां तशरीफ़ ले आते हैं, अक़ीदह यह है की जिस महफ़िल में आना चाहें आ सकते हैं, नबी को दूरी नज़दीकी रुकावट नहीं होती, दुन्या उनके सामने ऐसी है जैसे, हथेली पर तिल का दाना.

कुरआन सूरह अहज़ाब आयत 45 में इरशाद है

"ए ग़ैब की खबरे बताने वाले (नबी) बेशक हमने तुम्हे भेजा हाज़िर नाज़िर और खुश खबरी देता और डर सुनाता"

तफ़्सीर सिरातुल जिनान फि तफ़्सीर उल कुरआन जिल्द:8 सफ़ह:57 पर है

"अहले सुन्नत का अक़ीदह है की सरकारे दो आलम अल्लाह की अता से हाज़िर नाज़िर हैं, और यह अक़ीदा आयात, अहदीस और बुज़ुर्गाने दीन के अक़वाल से साबित है"

कंज़ुल उम्माल जिल्द: 6 सफ़ह: 189 पर है

हज़रते अब्दुल्लाह बिन उमर से रिवायत फ़रमाया हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने - अल्लाह ने सारी दुन्या मेरे सामने कर दी है लिहाज़ा मैं सारी दुन्या को और जो कुछ उसमे क्रियामत तक होने वाला है, सब का सब यूँ देख रहा हूँ, जैसे इस हाथ की हथेली को देख रहा हूँ,



अखबारूल अखयार में है -

“शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) फरमाते हैं

अहले हक़ में से इस मसअले में किसी का भी इख्तिलाफ नहीं की हुज़ूर अपनी हक़ीक़ी ज़िन्दगी मुबारकरा के साथ दाइम और बाक़ी हैं, और उम्मत के अहवाल पर हाज़िर ओ नाज़िर हैं, और हक़ीक़त के तलबगारों को और उन हज़रात को जो आपकी तरफ़ मुतवज्जेह हैं, उनको फैज़ भी पहुंचाते हैं, और उनकी तरबियत भी फरमाते हैं,

शेख अब्दुल हक़ मुहद्दिसे देहलवी (رضي الله عنه) तकमीलुल ईमान में फरमाते हैं

“चार औलिया क़बर में ज़िंदा है और मशाइखे किराम फरमाते हैं, मैंने औलिया अल्लाह में चार ऐसे बुजुर्गों को देखा है जो अपनी क़बरो में भी तसरफ़ करते हैं, उनका तसरफ़ उनकी ज़िन्दगी की हालत से किसी तरह कम नहीं होता”

इससे मालूम हुआ की बाज़ औलिया को भी अल्लाह ने वो कुव्वत दी है की जहाँ आना जाना चाहे आ जा सकते हैं, और ये बात देओबंदी की किताबो से भी साबित है देखें, फतावा दारुल उलूम ज़करिया जिल्द:1 सफ़ह:54

والله تعالى أعلم بالصواب

सुवाल:28 (2311, जिल्द: 4)

वारसी साहब हम मेराज 27 रजब को क्यों मनाते है, हलाकि ये तारीख़ हदीसो में मौजूद नहीं है कुछ उलामा कहते है की 15 जुलहिज्जा को मेराज की रात हो सकती है और कुछ कहते है की रजब में है या नहीं किसी को नहीं पता तो मुफ़्ती साहब इसका जवाब इनायत फरमाएं

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

कुरआन में सूरह बनी इस्राइल और आयत 1 में है-

سُبْحَنَ الَّذِي أَسْرَى بِعَبْدِهِ لَيْلًا مِّنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ إِلَى الْمَسْجِدِ الْأَقْصَا

(पाकी है उसे जो अपने बन्दे को रातो रात ले गया मस्जिदे हराम से मस्जिदे अक्सा तक)

तफ़सीर सिरातुल जिनान फि तफ़सीर उल कुरआन जिल्द:5 सफह:414 पर है  
“नुबूवत के 12वीं साल हुज़ूर मेराज से नवाज़े गए, अलबत्ता महीने के बारे में  
इख़्तिलाफ़ है मगर ज़्यादा मशहूर यह है की 27 रजब को मेराज हुई”

इन्हे असाकिर में है

“जिसने रजब की 27 का रोज़ा रखा उसके लिए 60 महीनों के रोज़ों का  
सवाब लिखा जाता है यह पहला दिन हैं जिसमे जिब्राइल हुज़ूर के लिए  
पैगामे इलाही ले कर हाज़िर हुए और इसी माह में हुज़ूर को मेराज शरीफ़ का  
शरफ़ हासिल हुआ

अल-मवाहिबुल लदुनिया जिल्द: 1 सफाह: 355 पर है

“इमाम रफाइ फरमाते हैं - मेराज का वाक़िया रजब के महीने में हुआ और  
मुहद्दिस अब्दुल गनी ने रजब की 27 भी मुताईन कर दी, अल्लामा ज़रक़ानी  
तहरीर फातमाते हैं, लोगो का इसी (27) पर अमल है और बाज़ मोअरिख़ीन  
के नज़दीक यह सबसे ज़्यादा क़वी रिवायत है”

अब रहा यह की जब तेह नहीं है तो मुस्लमान 27 क्यों मनाते हैं? इसी रात  
इबादत क्यों करते हैं, तो ये वहबीओ की पैदाइशी आदत है जो अपने बुज़ुर्ग  
(इब्लीस) से सीखी है, की हुज़ूर की मुहब्बत में जब खुशी मनाई जाये इबादत  
की जाए तो उससे रोका जायेगा, अगर मान लो की 27 रजब वो तारीख़ नहीं

तो सवाल है यह की अगर मुस्लमान उसे 27 रजब समझ कर नमाज़, नियाज़, इबादत का एहतिमाम करते हैं, तो इसमें हर्ज़ ही क्या है कोन सा इस रात शराब हलाल की जाती है जिस पर एतराज़ हो, अब्दुलाह बिन मसऊद (رضي الله عنه) से मरवी- رَأَى الْمُسْلِمُونَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللَّهِ حَسَنٌ

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ أُمَّتِي عَلَى الضَّلَالَةِ - (मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी) وهو تعالى أعلم بالصواب

सवाल:29 (2355, जिल्द: 4)

रजब महीने में 22 तारीख को इमाम जाफर सादिक की नियाज़ क्यों कराई जाती है क्योंकि रजब महीने में ना उनकी पैदाइश की तारीख है ना उनकी वफ़ात की तो इस महीने में उनसे ये निस्बत कहा से साबित है और 22 रजब को तो हज़रते मुआविया की वफ़ात का दिन है ?

जवाब : بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

सुन्निओं को इस बात का इल्म होना चाहिए की कूंडे इसाले सवाब है और इसाले सवाब हर महीने में जाइज़ है, तो अगर रजब में उन्हें सवाब भेजा जायेगा तो कौन सी आफत आ गई, वरना एतराज़ करने वाले से आप ही पूछ लो की, इमाम जाफर का कौन सा महीना है उस महीने में भी सवाब भेज देंगे, और अगर वो कहता है की उनका महीना कही से साबित नहीं, तो आप कहना जिसका महीना तय नहीं होता उसका सवाब रजब में रोक दिया जाता है क्या? बात इतनी सी है की रजब उनका महीना हो या ना हो सवाब तो

365 दिन ही किया जा सकता है, और वैसे भी इमाम जाफर के विसाल की तारीख 15 रजब है न की 22 और अगर 22 रजब को इमाम जाफर की नियाज़ होगी तो भी उन्हें ही सवाब जायेगा, चाहे वो दिन हज़रते मुआविया ही का ही क्यों न हो, और अगर मान लो की वो दिन हज़रते मुआविया का है तो उनसे भी अहले सुन्नत को कौन से दुश्मनी है, हम तो आम फातिहा में भी सबको शामिल करते हैं, तो अगर मुस्लमान माहे रजब की 22 को इमाम जाफर की फातिहा करे तो हर्ज़ कैसा ? अब्दुलाह बिन मसऊद (رضي الله عنه) से मरवी- رَأَاهُ الْمُسْلِمُونَ حَسَنًا فَهُوَ عِنْدَ اللَّهِ حَسَنٌ

(तमाम मुसलमान जिस चीज़ को अच्छा मान लें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छी है,) क्योंकि हदीस में हुज़ूर ने फ़रमाया - لَا يَجْتَمِعُ أُمَّتِي عَلَى الضَّلَالَةِ - (मेरी उम्मत गुमराही पर जमा नहीं होगी)

फतावा फ़कीह मिल्लत जिल्द:2 सफ़ह: 65 पर है

22 रजब के बजाये इमाम जाफर की नियाज़ 15 रजब को करें  
والله تعالى اعلم وعلمه جل مجده اتم واحكم-

सुवाल:30 (1679, जिल्द: 3)

सय्यिदों का मर्तबा बड़ा क्यों है? और सिर्फ अहले सुन्नत वाले ही उनका मर्तबा बड़ा कहते हैं क्यों जबकि वहाबी के वहां सब बराबर हैं, जबकि हुज़ूर ने कहा तुम एक दुसरे के भाई हो कोई गोरा कोई काला नहीं, तो हम सय्यिदों को क्यों बढ़ावा देते हैं,

जवाब : بسم الله الرحمن الرحيم

जो हदीस आपने ब्यान फ़रमाई बेशक हक़ है मगर अहले बैत की फ़ज़ीलत पर कुरआनी आयात व अहादीस कसरत से मौजूद है, अगर वहाबी इतना ही हुज़ूर की बात पर अमल करने वाले हैं तो हुज़ूर ने ये भी फ़रमाया की मेरी ख्वाइश है की सूरह यासीन मेरी उम्मत के सीने में हो तो इस हदीस पर अमल करते हुए हर वहाबी ने सूरह यासीन हिफ़ज़ कर ली.? इसी तरह वो गोर काले वाले हदीस, फ़ज़ाइल की तमाम हदीस का रद्द नहीं करती, अब फ़ज़ाइले अहले बैत

कुरआन में अल्लाह फरमाता है **सूरह शूरा आयत 25** में

"तुम से इस (तबलीग़े रिसालतो दीन) पर कुछ उजरत नहीं मांगता मगर क़राबत (अहले बैत) की मुहब्बत"

और फरमाता है अल्लाह **सूरह अहज़ाब आयत 33** में

"अल्लाह तो यही चाहता है ए नबी के घर वालो की तुमसे हर नापाकी दूर फरमा दे, और तुम्हे पाक करके खूब सुथरा कर दे"

तफ़्सीर खज़ाइनुल इरफ़ान में है- "इस आयत से अहले बैत की फ़ज़ीलत साबित होती है"

**मिशकात शरीफ** में है

"6 आदमी वह है जिन पर मैंने और अल्लाह ने लानत की (उनमे से एक यह भी है) जो मेरी अहले बैत के मुताबिक़ उन बातों को हलाल समझे जिन्हे अल्लाह ने उन पर हराम किया"

इस हदीस की शरह **मिरात जिल्द:1 सफ़ह:97** पर यूँ है

"यानि हुज़ूर की औलाद की बेहुरमती, उन पर जुल्म और सितम करने वाले पर इतरत रसूल औलादे फातिमा है उनकी ताज़ीम दीन में दाखिल है, जब

कुर्वे काबा की वजह से हरम की ज़मीन का एहताराम है तो कुर्वे मुस्तफा की वजह से सादात का एहताराम यक़ीनन लाज़िम है"

फतावा रज़विया जिल्द: 22 सफ़ह: 420 पर है

"सादात किराम की ताज़ीम फ़र्ज़ है और उनकी तौहीन हराम"

الاستخفاف بالاشراف والعلماء كفر (सादात किराम व उलामा की तहक़ीर कुफ़र है)

इमाम तबरानी ने हदीस नक़ल की

हुज़ूर ने फ़रमाया – "सबसे पहले मैं जिस ग़िरोह की शफ़ाअत करूँगा वो मेरी अहले बैत हैं"

कंज़ुल उम्मत में है - اول من يرد على الحوض اهل بيتي ومن احبني من امتي

"सबसे पहले मेरे पास हैज़े कौसर पर आने वाले मेरी अहले बैत हैं, और मेरी उम्मत से मेरे चाहने वाले"

इमाम बहैकि ने इसे हज़रत अली से कुछ अल्फ़ाज़ की ज़्यादती के साथ रिवायत किया, और कंज़ुल उम्माल में है –

من لم يعرف حق عترتي فلاحدي ثلث اما منافق واما ولدزانية واما حملته امه على غير طهر

"जो मेरी औलाद का हक़ न पहचाने वो इन तीन में से है मुनाफ़िक़ या हरामी या हैज़ी बच्चा"

और फ़रमाया- انما سیت فاطمة لان الله تعالى حرّمها وذريتها على النار

(इनका फातिमा नाम इसलिए हुआ की अल्लाह ने इनको और इनकी तमाम औलादों को आग पर हराम फार्मा दिया)

और फ़रमाया:- ان الله غير معذبک ولا ولدک اوکما قال صلى الله تعالى عليه وسلم

(ए फातिमा अल्लाह ना तुझे अज़ाब करेगा ना तेरी औलाद में से किसी को) हाकिम ने इसे सहीह कहा हुज़ूर ने फ़रमाया- “मुझ से अल्लाह ने मेरी अहले बैत के हक़ में फ़रमाया की इनमे से जो तौहीद ओ रिसालत का इक्रार करने वाला हुआ उन्हें अज़ाब न फरमाए “

इस हदीस के तहत आलाहज़रत फरमाते हैं, "अल्लाह से उम्मीदे वासिक यही है की आखिरत में उनको किसी गुनाह पर अज़ाब न दिया जायेगा”,

तिर्मिज़ी ने हज़रत जाबिर से रिवायत की फ़रमाया – “हम मुनाफ़िक़ को हज़रत अली के बुग़ज़ से पहचानते थे”

इमाम कस्तलानी ने मवाहिबुल लदनिया में फ़रमाया

"अल्लाह ने हुज़ूर की तमाम अहले बैत की मोहब्बत फ़र्ज़ कर दी है”

फतावा रज़विया जिल्द: 22 सफ़ह: 423 पर है

"सय्यिद सही-उन-नसब की ताज़ीम लाज़िम है, अगरचे उसके अमाल कैसे ही हों, उनके अमाल के सबब उनसे नफरत ना की जाये, सादाते किराम की इतिहाए नसब हुज़ूर पर है इस निस्बत की फ़ज़ीलत की ताज़ीम (आम मुस्लमान को तो क्या) मुतक्की पर (भी) फ़र्ज़ है क्यूंकि ये इस (अहले बैत) की ताज़ीम नहीं हुज़ूर की ताज़ीम है”

अलमुस्तदरक ने अबू ज़र से रिवायत की फ़रमाया - "तुम में मेरी अहले बैत की मिसाल कश्ती नूह की तरह है, जो इसमें सवार हुआ वो निजात पायेगा, और जो पीछे रह गया हलाक़ हो गया”

मिशकात में (दौरान खुत्वा फ़रमाया)

मैं तुम्हें अपने अहले बैत के मुताबिक़ अल्लाह से डराता हूँ, (यही अल्फ़ाज़ तीन बार कहे)

यानि मैं तुमको अपनी अहले बैत के मुतालिक अल्लाह से डराता हूँ, की उनकी नाफरमानी, बेअदबी भूल कर भी ना करना, वरना दीन खो बैठोगे,

मिरात शरह मिशकात में है

“अल्लाह की मुहब्बत के लिए मुझ से मुहब्बत करो और मेरी मोहब्बत के लिए मेरी अहले बैत से मोहब्बत करो”

जामेउस सगीर में है –

“अपनी औलाद को तीन बातें सिखाओ, मेरी मोहब्बत, मेरी अहले बैत की मोहब्बत और तिलावते कुरआन”

हदीस मिशकात में है –

“ए लोगो मैंने तुममे दो चीज़े छोड़ी है, जब तक तुम उनको थामे रहोगे गुमराह नहीं होंगे, एक कुरआन और दूसरी मेरी अहले बैत”

देहलमी ने फ़रमाया -

"उस ज़ालिम पर अल्लाह सख़्त अज़ाब करेगा, जिसने मेरी औलाद को तकलीफ़ दी, या परेशान किया उन्हें नुकसान पहुंचाया"

अबू नईम ने उस्मान गनी से रिवायत की –

“दुनिया में जिस किसी ने मेरी अहले बैत से कोई नेक या अच्छा सुलूक या अहसान किया, और वो अहले बैत उसका बदला ना दे सके, तो क्रियामत के दिन मैं उसकी तरफ से पूरा बदला अता करूँगा”



तफ़्सीरे कबीर में है

खबरदार हो जाओ, जो शख्स अहले बैत की दुश्मनी पर मरा, वो क्रियामत के दिन इस हाल में आएगा, की उनकी दोनों आँखों के दरमिआन लिखा होगा, अल्लाह की रेहमत से नाउम्मीद

इमाम बहैकि ने रिवायत किया

कोई बंदा कामिल मुस्लमान नहीं हो सकता जब तक मैं उसे अपनी जान से ज़्यादा प्यारा ना हो जायूँ और मेरी औलाद अपनी जान से प्यारी ना हो जाये,

इसी तरह बहुत हदीसे हैं, और बुजुर्गाने दीन के अक़वाल का खुलासा है -

- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा शहादत की मौत मरा
- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा कामिल ईमान के साथ मरा
- जो अहले बैत की मोहब्बत में फोत हुआ उसे ऐसी इज़्ज़त के साथ जन्नत में ले जाया जायेगा, जैसे दुल्हन दूल्हे के घर,
- जो अहले बैत की मोहब्बत पर मरा उसके लिए क़बर में जन्नत के दरवाज़े खोल दिए जाते हैं,
- जो अहले बैत से दुश्मनी रखे मुनाफ़िक़ है
- जो अहले बैत से दुश्मनी रखे हरामी की औलाद है
- उसका ख़ातिमा कुफ़्र पर होने का खौफ़ है
- इनकी मोहब्बत ईमान की निशानी है
- इनकी मोहब्बत अल्लाह रसूल की मोहब्बत का जरिया है

इसलिए आलाहज़रत फरमाते हैं -

दो जहाँ में खादिम ए आले रसूलाह कर

हज़रते आले रसूले मुक्तदा के वास्ते  
 हुब्बे अहले बैत दे आले मुहम्मद के लिए  
 कर शहीदे इश्क़े हम्ज़ा पेशवा के वास्ते  
 अब रहा सवाल का दूसरा पहलु की वहाबी देओबंदी के वहां सब बराबर हैं,  
 तो इसका जवाब बहुत आसान और समझ में जल्द आने वाला है की -  
 जिसके वहां नबी और उम्मती बराबर हों  
 जिसके वहां नबी का इल्म और शैतान का इल्म बराबर हो  
 जिसके वहां मज़ार और मूर्ती बराबर हो  
 जिसके वहां नियाज़, हराम के बराबर हो  
 जिसके वहां वली से मदद शिर्क के बराबर हो  
 जिसके वहां दरगाह की हाज़री बुतपरस्ती के बराबर हो  
 तो उसके नज़दीक सय्यिद और गैरे सय्यिद बराबर हो जाये तो क्या बड़ी बात

शिर्क ठहरे जिसमे ताज़िमे हबीब  
 उस बुरे मज़हब पे लानत कीजिये  
 والله تعالى اعلم بالصواب والله يرجع اليه مآب

ماشاء الله لا قوة الا بالله

